परिच्छेद-१

शोध परिचय

१.१ पृष्ठभूमि

विद्यापतिका जन्म १३५० ई. के लगभग माना जाता हैं । इस शताव्दीके अन्तिम दशक में तुगलक शासन के कमजोर हो जाने पर जौनपुर राज्य की स्थापना हुई । विद्यापति के आश्रयदाता राजा शिवसिंह थें । इनका जन्म स्थान बिहार राज्य मधुवनी जिला के विसपी नामक गाँव में एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में हुआ था । इनके पिता गणपति ठाकुर राजपंडित थें । जनश्रुति के अनुसार विद्यापति अपने पिता के साथ बचपन से ही राजदरवार में जाया करते थें । राजा कीर्ति सिंह के राजा बनने के बाद विद्यापति को राज्याश्रय प्राप्त हुआ । इसी समय इन्होंनें "कीर्तिलता" की रचना की । राजा कीर्ति सिंह के बाद राजा शिवसिंह राजसिंहासन पर आसिन हुए और उन्होनें विद्यापति को अतिशय सम्मान दिया । उन्होंने विद्यापतिको "अभिनव जयदेव" की संज्ञा से विभूषित किया तथा विसपी गाँव दान में दिया । ऐसा ज्ञात होता हैं कि राजा शिव सिंह के समय में ही उन्होने अधिकांश पदों और गीतो की रचना की जो उस समय की लोकभाषा (मैथिली) में लिखे गए । विद्यापति लगभग १२ वर्ष नेपाल तराई में स्थित द्रोणवार के राजा पुरादित्य के आश्रय में रहे और वहीं इन्होने "लिखनावली" की रचना की और "श्रीमद्भागवत" की प्रतिलिपि भी तैयार की ।

विद्यापति ने तीन भाषाओं में रचनाएँ की । संस्कृत में इन्होने भूपरिक्रमा, पुरुषपरीक्षा, लिखनावली आदि लगभग १५ पुस्तकें लिखी । अपभ्रंश में दो रचानाएँ कीर्तिलता और कीर्तिपताका उपलब्ध हैं । इनकी लोकप्रियताका मूल कारण इनकी मैथिली रचनाएँ हैं । जन्म से लेकर मृत्योपरान्त उनकी गीत सरस एवम् मार्मिक हैं ।

विद्यापति के गीतोंका प्रमुख विषय भक्ति और श्रृंगार रहा है । ये राजदरवार में रहते थें और उस वातावरण में पुरी तरह समाहित थें । पुराने सामन्ती दरवारों में श्रृंगार और वीर रस की रचनाएँ ही अधिक उपयुक्त मानी जाती थी । परन्तु उस समय भी आध्यात्मिकता को जीवनका अभिन्न अंग माना जाता था । इसी को लक्ष्य कर विद्यापति ने भी कहा हैं -"माधव हम परिणाम निराशा" ।

विद्यापति मुख्यत: प्रेम और सौन्दर्य के लोकप्रिय गायक हैं । अपने पदों में नारी का नख-शिख वर्णन कर अद्‌भूत ख्याती प्राप्त किया हैं । मौलिक रुप से संयोग श्रृंगार के चितेरा है परन्तु विप्रलंम्भ श्रृगार के चित्रण में भी अपनी सहृदयता का परिचय दिया हैं । कृष्ण और राधा को नायक-नायिका के माध्यम से चित्रित कर भाव सौदर्न्य और हृदयग्राही अनुभूति का विस्तृत परिचय दिया हैं । प्रकृति सम्बन्धी पदों को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया हैं । वसन्त विद्यापति की प्रिय ऋतु हैं । कवि की अद्‌भुत निरीक्षण क्षमता और कल्पना शक्तिका अनोखा संगम दृष्टिगत होता हैं । एक ओर जहाँ विद्यापति की नायिका संयोग पक्ष में अपने हृदय के उद्‌गार को इस प्रकार अभिव्यक्ति करती हैं -"सुतल छलहुँ हम घरवा रे गरवा मोती हार" वहीं वियोग पक्ष में आर्तक्रन्दन सुनाई देता हैं -सखि हे हमर दुखक नहीं ओर ।, सावन भादो की अधिआरी काली रात में विरहिणी वाला अपने प्रवासी पति की याद में आठ -आठ आँसु वहाती हैं ।

गाँव से लेकर शहर तक विद्यापति के गीत मैथिल ललनाओं के कंठो में समाहित हैं । चाहे जन्मोत्सवकी खुशी हो अथवा विवाह का मधुर आनन्द, मुंडन हो अथवा यज्ञोपवित, उससे भी अधिक भाव विह्वलताका क्षण वेटी की विदाई का होता हैं सब समवेत रुप में कोकिल कंठी ललनाएँ गाती हैं - बर रे जतन सँ हम सियाजी..... लोकप्रियता की चरम पराकाष्ठा उनके गीतों का प्राण है एवम् सहज स्वभाविक शव्दों का विधान सोने में सुहागा सदृश हैं ।

किसी भी शीर्षक में शोध कार्य करने से पहले उसके ऐतिहासिक पृष्ठभूमिका अवलोकन करना परमावश्यक कार्य होता हैं । कोकिल की कलकंठता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती हैं, इसका परिचय इसी से मिलता हैं कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानों को कवि कुल गुरुमहर्षी वाल्मीकि की वंदना के लिए जिह्वा खोलनी पडी तव उन्होने यही कहा-

कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुध्य कविता-शाखां वन्दे वाल्मीकि कोकिलम् ॥

इस एक श्लोक ही में -जो समस्त गुण आदि कवि की रचनाओं में है उनका व्यापक निरुपण है-थोडें सें शब्दो में ही वहुत कुछ कह दिया गया हैं । इसी प्रकार भारती के वरपुत्र

विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओं का परिचय देने, उनके माधुर्य, प्रसाद, सरसतां और मनोमुग्ध कारिता की व्याख्या करने के लिए उनकों मैथिल कोकिल कह देना ही पर्याप्त है ।

विद्यापति, प्राचीन हिन्दी कवि चन्द्रवरदायीको छोडकर सभी प्रसिद्ध हिन्दी कवियों से पहले हुए थे । इनके जन्म से पहले हिन्दु राजा एक के वाद एक धराशायी होने लगे थे । अन्तिम हिन्दु सम्राट दिल्ली नरेश पृथ्वी राज चौहान यवनोद्वारा परास्त कर दिए गये । हिन्दु राजा लोग आपसी कलह और अहँ की आगसे झुलसकर नष्ट हो गयें । देश में यवनो का शासन आ गया । राजपूतों की वीरता कायरता में वदल गयी । दिल्ली पर तुगलक वंशी पठानों की अधिनता स्वीकार कर लिया । अपनी स्वाधिनता वचाने वाले राजा या तो मार गिराये गये अथवा पलायनकर गये । विद्यापति के आश्रय दाता राजा शिवसिंह के समय में भी तुगलक-वंशी पठान-सम्राट गयासुद्दीन का राज्यकाल था । संस्कृत भाषा दिनप्रतिदिन ह्रास की ओर बढने लगी । ऐसे में देशी भाषा में कवि लोग अपनी रचना करने लगे । स्वयं विद्यापति ने लिखा हैं - देसिल वयना सव जन मिट्ठा ।

तें तैसन जम्पओ अवहट्ठा ॥

विद्यापति कालका समय वाद-विवाद, लडाई झगडा, छिना झपटी, तथा रक्त रञ्जित का समय था । राजा शिवसिंह के साथ भी वैसी ही घटना घटी थी । ऐसे में प्रायः कवि लोग जिसका खाना उसीका वजाना के रुपमें अपनी कविताएँ आश्रय दाताओं के यशोगान में किया करते रहे । विद्यापति ने भी अपने आश्रय दाता राजाओं के निर्देशानुसार काव्य रचना इस प्रकार किया ।

कीर्तिलता -

भू परिक्रमा - राजा शिवसिंह के कहने पर ।

पुरुष परीक्षा - राजा शिवसिंह के कहने पर ।

कीर्ति पताका -

लिखनावली - राजा वनौलीके अधिपति पुरादित्य के लिए ।

शैव सर्वस्वसार - विश्वास देवी के आग्रह पर ।

गंगा वाक्यावली - विश्वास देवी के लिए ।

दुर्गाभक्ति-तरंगिणी - नरसिंह देव के कहने पर ।

तुलसी जैसे कुछ स्वाभिमानी कवियों ने स्वान्तः सुखाय की भावना में भगवत् आराधनायुक्त काव्य रचना में लग गये । विद्यापति ने भी कोमल कान्त पदावली के प्रवर्तक जयदेव के पथ चिन्ह का अनुशरण किया । इसी लिए विद्यापतिको अभिनव जयदेव की उपाधि भी मिली । विद्यापति भी स्वान्तः सुखाय के लिए राधाकृष्ण को अपनाया । श्री चैतन्य देव भारत के एक अवतारी पुरुष हो गये है । ये विद्यापति की रचनाओं से वहुत प्रभावित थे । इनके शिष्य परम्परा में विद्यापति का पद चिन्ह अनुशरण करते हुए कृष्णदास, नरोत्तम दास, गोविन्द दास, ज्ञान दास, श्रीनिवास, नरहरि दास आदि कवियोने कविताएँ बनाना आरम्भ किया । इतना ही नही सूरदास आदि हिन्दी के भक्त कवियों पर भी इनके पद लालित्य का स्पष्ट छाप दिखाई पडता हैं । विद्यापति ही एक ऐसे कवि हो गये हैं जिन्हे एक साथ विहार, बंगाल, नेपाल तथा हिन्दी के अन्य प्रदेशों में समान भाव से ख्याति मिली हैं । विद्यापति बहुदेव में विश्वास करते थे इसी से तो वे राधाकृष्णके साथ साथ सीताराम, गौरीशंकर, दुर्गाभवानी तथा गंगादि देवताओं को समान भाव से भक्ति की हैं ।

राधाकृष्ण सम्बन्धी पद्य के आधार पर इन्हे सर्व प्रथम श्रृगारिक कवि कहा गया है । और वे श्रृगारिक कवि थे । अन्तिम समय में संसार से इन्हे विरक्ति हो गई थी - माधव, हम परिनाम निरासा कह कर भक्ति परक पद्य लिखने लगे थे । राधाकृष्ण सम्बन्धी पद्य के आधार पर इन्हे वैष्णव धर्मावलम्बी कहा जाता है । परन्तु वे शुद्ध शैवमत के मानने वाले थे । एक ओर जहाँ नारियाँ इनके रचित पद्य को गा-गाकर आत्मविभोर हो उठती है तो दुसरी ओर पुरुषगण इनकें नाचारीको गा-गाकर झूम उठते हैं । विद्यापति को श्रृगारिक ओर भक्ति कवि के साथ साथ जनकवि के रुप में भी देखा जा सकता है । कवि द्रष्टा और स्रष्टा दोनो होते है । सामाजिक प्राणी होने के नाते किसी भी कविका पहला दायित्व होता है समाजका प्रतिनिधित्व करना ।

विद्यापति भी प्रतिनिधी कवि थे । जिस समयका जैसा परिवेश था वे उसी तरहसे अपने को ढालते गये । युवा युवती के प्रतिनिधित्व में श्रृगारिक पद्य रचेतो ढलती उमर वालों के लिए भक्ति परक । इनके पद्योको भलिभाँति देखा जाये तो वे किसी न किसी रुपमें जन प्रतिनिधित्व करते पाए जाते हैं । विद्यापति के समय में भी सामाजिक कुरीतियाँ विसंगतीया गतिया विद्यामान थी । वालविवाह, अनमेल विवाह, वहु विवाह, वलात्कार, प्रलोभन राहजनी, दूती सहयोग परकिया नायिका , मान भंग, भर्तिका नारी, पर पीडा,

गरीबी नोक-झोक आदि । खासकर मुसलमानो का अधिपत्य होने के नाते सामाजिक सद्भाव में ग्रहण लग रहा था ।

संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान होते हुए भी उन्होंने जन चेतना जगाने के लिए भाषा साहित्यका सहारा लिया । अपने समय के प्रचलित शैली को अपनाकर कविताएँ की । इनके द्वारा रचित कविता संग्रह "विद्यापति की पदावली के नाम से प्रसिद्ध हैं । कविने अपनी लेखनीद्वारा असहायों की पीडा, कष्ट, दुःख, दर्द तथा उनके मनोगत भावको उठाया हैं - चाहे पराजित राजा हो, चाहे वियोगिनी अवला नारी हो, या अन्य कोई अकिंचन पुरुष निर्वल के वलराम के तहत उन्होंने भगवच्छरणम्को छोडकर इस संसार का कोई सार नहीं है । इनके नायक और नायिका तत्कालिन सामाजिक परिवेश का प्रतिनिधित्व करते है । इनके द्वारा इनके समये के मान, मनौअल, संयोग, वियोग छन्द, अलंकार रसादि शास्त्रीयोपकरणो का प्रचूर मात्रामें प्रयोग हुआ है । यहाँ हम ने उनके अन्य पक्षो के साथसाथ उनके जनप्रतिनिधित्व मूलक पक्षको भी उजागर करना अपना लक्ष्य समझी हूँ ।

विद्यापति के पास कोई दण्ड विधान नही था । वे कवि थे उनके पास कागज, कलम और मृदुल भाव को छोडकर और क्या था जो वे अपराधी को दण्ड देते । "सत्यम ब्रुयात् प्रियं ब्रुयात न ब्रुयात सत्यम-प्रियम्" नीति है - प्रिय सत्य कहें, अप्रिय सत्य कदापि न प्रकट करें । विद्यापति भी इसी नीतिगत मान्यताको लेकर चले और अपनी कान्त पदावली के द्वारा तत्कालीन सामाजिक कुरीतियों को दूरकरने का भरपूर प्रयास किया । उनका यह प्रयास राधाकृष्ण के माध्यम सें मात्र हुआ है । आवें देखें राह चलते महिलाओं के साथ छेडखानी वाली घटनाको वे किस रुप से चित्रण किए हैं -

कुंज - भवन सएँ निकसलि रे, रोकल गिरधारी ।
एकहि नगर वसु माधव हे, जनि करु बटमारी ॥२॥
छाडकान्ह मोर आँचर रे, फाटत नव - सारी ।
अपजस होएत जगत भरि हे, जनि करिअ उधारी ॥४॥

विद्यापति पदावली - ५९ पृष्ट ३६

एक अवला नारी अपनी आवरु वचाने के लिए अपने साथ हुल हुज्जत करनेवाले लफंगे से कैसे दीन पुकार कर रही हैं । इसी प्रकार अनमेल विवाह में फंसी एक युवती की करुण वेदना को तो सुनिए:-

पिया मोर बालक हम तरुनी ।
कोन तप चूकी भेल हुँ जननी ॥

विद्यापति पदावली - २६३ पृष्ट १४३

अपनेसमय के वैष्णव और शैवसम्प्रदायों में हो रहे आपसी खिचातानी को कवि ने इस प्रकार समन्वय कराया हैं -

भल हरि भल हर भल तुअ कला ।
खन पित वसन खनहि वघछाला ॥ इत्यादि ।

वे शिव और विष्णुको एक ही रुप की दो कलाएँ मानते थे । इस पक्ष का मजवूत आधार तुलसी ने भी राम के मुख से कहलावाया है - शिव द्रोही मम दास कहावा, सो नर मोहि सपनहु नहि भावा । दरवारी कवि होते हुए भी कवि ने जनसमुदाय की समस्याओ को सुना, देखा और समझा । उनकी समस्याओं का निदान हेतु अपने पद रुपी अर्जी राजा-रानी में प्रस्तुत किया । जिसे राजा और रानी ने मन्त्रमुग्ध होकर सुने और उसका समाधान भी किया । विद्यापति सरल, सत्यवादी, मृदुभाषी, मिलनसार, दयालु, परोपकारी एवं आध्यात्मवादी व्यक्ति थें । राज नेताओं में होने वाले गुण से भरपूर थे । यही कारण था कि इनकी रचनाएँ राजमहल से लेकर गरीवो की झोपडी तक में एक समान आदर पाती रही ।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध पत्र का शीर्षक जन प्रिय कवि विद्यापति का अध्ययन महत्वपूर्ण है । विद्यापति की काव्य प्रतिभा और व्यापक लोक प्रियता का आधार उनकी मैथिली रचनाएँ ही है । विद्यापति ने तीन भाषाओं में रचना की संस्कृत में अनेक रचनाओं के साथ साथ अपभ्रंश में कीर्तिलता और कीर्तिपताका की रचनाएँ उपलब्ध है । मैथिली गीतों की रचना कवि की आरम्भिक जीवन काल से मृत्युपर्यन्त होती रही, विद्यापति पदावली में उन गीतोंका समग्र रुप से संग्रह मिलता हैं ।

मुझे विश्वास है कि इस शोध पत्र की सामग्री और इसके विषय वस्तु से अन्वेषक और पाठक वर्ग दोनो लाभ उठाएँगे । विद्यापति के विषय में जिज्ञासुव्यक्तिओ के लिए यह शोधपत्र उपयोगी होगी मुझे पूर्ण विश्वास है ।

१.२ शोध समस्या

आदिकाल से लेकर अवतक विद्यापति की "पदावली" जिस में सम्पूर्ण मिथिला की संस्कृति का संकलन हैं निश्चित रुपेण एक प्रकाश स्तम्भ की तरह प्रतीत होता हैं । साथ ही जिसके माध्यम से निम्नलिखित विशेषताओं का परिचय मिलता हैं-

१. राज्यश्रित कवियो की भावधारा का विकास ।
२. भक्ति और श्रृंगारिक कविताओं के रुप में जनप्रिय कवि विद्यापति ।
३. जनप्रिय कवि विद्यापति के रुप में कविताओं का विश्लेषण ।
४. भावपक्ष के साथ कलापक्ष का विकास ।

आदि कालसे आजका वैज्ञानिक युग में शोध की सम्भावनाएँ वनती जा रही है । सत्य तथ्य से अवगत होने के लिए वौद्धिक वर्ग प्रयत्नशील हैं । ऐसे में विद्यापति के विषय में सही जानकारी पाने के लिए उनका जन्म स्थान, शिक्षा, दीक्षा, रचना स्थल, आश्रयदाताओ का निवास स्थल, प्रमाणिक कृतियाँ, पुस्तकालय में सम्बन्धित पुस्तक का अभाव, मिथिला वंशीय राजाओ का शालिक और क्रमबद्ध नामावली न होना, शोधकर्ता महिलाओ के लिए आने-जाने और ठहरने की समस्या, रचित रचनाओ का अभिलेख और आश्रयदाताओं के स्थल का अवलोकन पर का अभाव, शोधकर्ताको खटकता रहता हैं । विद्यापतिका सम्वन्ध मैथिली, हिन्दी और वंगाली भाषा से अधिक रहा है । उसमें भी मिथिला क्षेत्र में उनका जन्म होने के नाते मैथिली भाषा से उनका निकटका सम्बन्ध रहा है । विद्यापति तथा उनकी कविता के विषय में जानकारी के लिए मैथिली भाषा का अध्ययन अति आवश्यक है । परन्तु दुर्भाग्यवश आज मैथिली भाषा वोल-चाल से उपर उठती नजर नही आरही है । इसमें पत्र-पत्रिका का अभाव शोध कर्ता के लिए अवरोध उत्पन्न करता है । हाँ मिथिला, मैथिली और इनके आदि कवि विद्यापति को यहाँ की महिला वर्ग ही संयोग कर रख रही हैं । शहरी महिला आधुनिकीकरण के रंग में रंगकर इसे भुलाती जा रही है । ग्रामिण महिला और बृद्ध-बृद्धा के जुवान पर अभी भी इनके द्वारा रचित पद्य, नाचारी, मानभंग, अभिसार, नोक झोंक,

वैवाहिक मंगल गीत, देवी स्तुति, राधाकृष्ण स्तुति, राम जानकी वन्दना, शिव पार्वती स्तुति झूम रहे होते है परन्तु वहाँ जाना, आर्थिक अभाव, यातायात की असुविधा, लोकलाज की प्रथा, गोष्ठी और प्रदर्शनी का अभाव की समस्याओं को देखा जा सकता है ।

१.३ शोध का उद्देश्य

इस शोधपत्रका निम्न लिखित उद्देश्य है जिन्हे समेटकर अध्ययन कार्य पूरा किया गया है ।

१. जनप्रिय कवि विद्यापति के व्यक्तित्व एवं कृतित्वका परिचय ।
२. विद्यापति के गीतों की लोकप्रियता का विश्लेषण ।
३. गीतोका भाव पक्ष एवं कलापक्ष का महत्व ।
४. गीतों का विभिन्न दृष्टिकोण से चित्रण ।

१. मिथिला की संस्कृति, सभ्यता, रीतिरिवाज, प्राचीनता, धार्मिकता और ऐतिहासिक महत्व के बारे में जानने की कोशिश करना ।
२. मैथिली भाषा की प्राचीनता, लिपि, उसके संरक्षण कर्ता के बारे में अध्ययन करना ।
३. मैथिली भाषा के आदि कवि विद्यापति के जीवन परिचय, धार्मिक आस्था, रचना, लोकमान्यता, राष्ट्रिय अन्तर्राष्ट्रिय महत्व के बारे में अध्ययन करना ।
४. श्रृंगारिक और भक्त कवि के साथ-साथ जन प्रतिनिधि के रुप में इनके कृत कार्यो का विशेष अध्ययन करना है।
५. विद्यापति के पद्यों का अभिलेख आश्रय दाताओं का नाम सूची, कवि के काव्यका क्षेत्र, वर्तमान समय में इसके महत्व के वारे में अभिलेख तैयार कर जन समक्ष रखना ।

१.४ शोध

शोध का औचित्य

जनप्रिय कवि विद्यापति की कविताओं का सम्यक अध्ययन एवं चिन्तन किया गया हैं साथ ही उन गीतो के माध्यम से गीति परम्परा में उनका योगदान मूल्याङ्कन किया गया हैं एवं आगे के शोधकर्ताओं के लिए मार्ग प्रशस्त किया गया हैं । शोध कार्य एक अभिबृद्धि

हैं । व्यक्ति की अभिबृद्धि सदैव होती हैं - चाहें वह शारीरिक रुप में हो चाहे मानसिक रुप में । उसके माध्यम से शोधकर्ता कुशलतापूर्वक सृजनात्मक विचार को सम्भव बनाता हैं ।

विद्यापति युग पुरुष थे । उन्होंने देश और समाज कें लिए जो कुछ दिया है वह इतिहास के पन्नो में शदियों अंकित रहेगा । मैथिली भाषा साहित्य में इनका अद्वितीय योगदान है । मांगलिक अवसर पर गाये जाने वाले इनके गीत किसका मन नही लुभाते है । ऐसे कवि के कृतिका अवलोकन करने से अपनी भाषा, संस्कृति, रीति और रिवाज के प्रति आकर्षण बढेगा । कवि कोकिल आस्थावान और शिव भक्त थे । अपने प्रति इनकी भक्ति को देख शिव स्वयं उगना के रुप में इन के यहाँ रहेथे । शिव के विना मन में शान्ति कहाँ । आस्थावान व्यक्ति को दु:ख और कष्ट नही होता, दु:ख और कष्ट तो सांसारिक है । शारीरिक कष्ट तो प्राणी मात्र को होता है । इनकी जीवनी से यह ज्ञात होता है कि वे देश भक्त और राज भक्त थे । अपने आश्रय दाता राजा शिवसिंह जो दिल्ली सुल्तान के कैद में थे । अपनी जान की वाजी लगाकर उन्हे कैद से छुटाया था । इसी लिए कवि की प्रतिभा और कर्म निष्ठता से पाठकगण प्रेरणा लेकर समाज और राष्ट्रहित बहुत कुछ कर सकता है । सामाजिक कुरीति दुर करने में कवि से प्रेरणा लिया जासकता है । भाषा प्रेम, साहित्य रचना और कविता सृजन में इनसे वढकर प्रेरणा का स्रोत कौन हो सकता है । इसी लिए अध्ययनका औचित्य आत्म गौरव को बढाना है ।

१.५ शोध की सीमा

विद्यापति का काव्य सागर अथाह है, इसमें गोता लगाना सहज काम नही हैं । आवश्यकतानुसार कुछ दुर तक अवगाहन किया जा सकता है । स्रोत साधन की कमी तथा न्यून ज्ञान के चलते इन महामानव के सम्पूर्ण ग्रन्थोका अनुशीलन करना अपने लिए दुश्कर कार्य है ।खास खास पद्यो के आधार पर उनके द्वारा सामाजिक बुराइयो के प्रति की गई टीका-टिप्पणी का अध्ययन करना है ।

- आश्रय दाता राजाओ के सम्वन्ध में अध्ययन करना ।
- मिथिला राज्य की स्थापना, मैथिली भाषा, मिथिला राज्य की सीमा, तथा मैथिली भाषा का संक्षिप्त परिचय ।

- आदि कवि का जीवन, रचना, धर्म-सम्प्रदाय, उपाधियाँ, आश्रयदाता शिवसिंह, लखिमा रानी के वारे में अध्ययन ।
- कवि का पारिवारिक जीवन, मृत्यु, रचना के प्रकार, सामाजिक विकृतियाँ और उसका उद्‌वोधन तथा जन प्रतिनिधित्वके रुप में विवेचना, उपरोक्त विषयवस्तु ही अध्ययन की सीमा होगी ।

१.६ शोधका व्यवस्थापन

इस शोध पत्र के प्रथम परिच्छेद १ में पृष्ठभूमि (भूमिका) समस्याओं की पहचान, अध्ययनका उद्देश्य, अध्ययनका औचित्य, अध्ययनका क्षेत्र, अध्ययनका व्यवस्थापन, अध्ययन की सीमा के बारे में उल्लेख किया गया हैं ।

परिच्छेद २ में अवधारणात्मक रुप रेखा, के वारे में उल्लेख किया गया है ।

परिच्छेद ३ में तथ्यांक संकलन विधि, तथ्यांक और सूचना का स्रोत, तथ्यांक प्रशोधन तथा विश्लेषण, के बारे में उल्लेख किया गया है ।

परिच्छेद ४ में मिथिला राज्य की स्थापना, मिथिला राज्य स्थापना पूर्व का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, मिथिला राज्य की सीमा, मैथिली भाषा का परिचय, विद्यापति के आश्रयदाताओं का क्रमबद्ध नाम तालिका के बारे में उल्लेख किया गया है ।

परिच्छेद ५ में कवि कोकिल का संक्षिप्त परिचय, कवि का प्रारम्भिक जीवन, संस्कृत में रचना, उपाधियाँ, धर्म सम्प्रदाय, आश्रयदाता शिवसिंह, कवि का मृत्युकाल, परिवार के बारे में जानकारी दी गई हैं ।

परिच्छेद ६ में श्रृगार परक पदावली, भक्ति परक पदावली, वन्दना और नाचारी, सामाजिक विकृतियाँ और उसका उद्‌बोधन, जन प्रतिनिधित्व, सुधार तथा उपाय के बारे में अध्ययन किया गया है ।

परिच्छेद ७ में सारांश, निष्कर्ष, सुझाव, अनुसूचि, सन्दर्भ सामग्री का उल्लेख किया गया है ।

विषय-परिचय (रुपरेखा)

मानव विकास के अनेक पक्षो में इसके दो प्रमुख पक्ष वाह्य (शारीरिक अवयव) और अन्तःकरण (भीतरी भाग) का बहुत महत्व रहता आया है । अन्तःकरण के परिष्कृत विना मानव विकास की पूर्णाहुति हो ही नही सकती है । अन्तःकरण शुद्धि और उसके विकास के लिए सरस्वती का आशीर्वाद लेना अति आवश्यक है । सरस्वती के वरदान विना कविकृत (कार्य) सम्भव नही होता है । "कवि करोति काव्यानि, रसं जानन्ति पण्डितां" कवि तो काव्य रचते है, परन्तु उसका मर्म विद्वान लोग ही समझते और समझाते हैं । काव्य मुख्यतया दो प्रकार के होते है - शास्त्रीय तथा लोक सम्मत (लोककाव्य) शास्त्रीय काव्य नीति निरुपण के साथ साथ अनुशासन व्यवस्था कायम करने में सहायक होते है तो लोक सम्मत (लोक काव्य) मनोरञ्जन प्रदान करने में सहायक होते है । कवि कोकिल विद्यापति शास्त्रीय और लोक सम्मत दोनो पक्षों पर अपनी लेखनी चलाई हैं । लोक सम्मत-लोक काव्य विद्यापति की पदावली को लेकर कवि विद्यापति जन-जन के गलेका हार वन गये है और इनका नाम कण्ठाहार पड गया । इनके काव्य की मुख्य भाषा मैथिली है परन्तु आज वंगाली और हिन्दी भाषा भाषी क्षेत्र के लोग इनकी काव्य भाषा पर अपना अपना अधिकार जमाते फिर रहे है । इसके लिए अनेक साक्ष्य प्रमाण पेश भी करते हैं ।

सुक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाय तो कविद्वारा रचित काव्य किसी खास भाषाका न होकर सभी भाषा भाषियों का अमूल्य निधि हो जाता है । यही कारण है की गीता, रामायण, वेद, उपनिषद्, संस्कृत भाषा में होने के वावजूद आज विश्व के अन्य प्रसिद्ध भाषाओं में अनुदित होकर जन कल्याण वा आनन्द दे रहे है ।

इसी लिए इस शोधपत्र के द्वारा विद्यापति से सम्बन्धित विविध पक्षों का संक्षिप्त अध्ययन के साथ इनके द्वारा रचित भाषा सम्वन्धित काव्य (विद्यापति पदावली) में संकलित पद्यों के आधार पर इन्हे जनप्रतिनिधि (कवि) के रुप में देखना ही मुख्य विषय वस्तु समझकर इस शोध पत्र की रुपरेखा तयार की गयी है । देश अथवा समाज में स्वच्छता, इमान्दारिता, नैतिकता तथा समन्वयात्मक भाव के लिए सेवा मूलक भाव होना परमावश्यक होता है । विद्यापति समन्वयात्मक कवि थे । इसका अकाट्य प्रमाण इससे और क्या होगा राजाओं की गगनचुम्वी अट्टालिकाओं से लेकर गरीवों की टूटी-फूटी झोपडियों तक में इनके

पदों का आदर है । भूतनाथ के मन्दिर और कोहवर-घर में इनके पदों का समान रुप से सम्मान है । कोई मिथिला क्षेत्र में आकर देखे तो एक शिव पुजारी डमरु हाथ में लिए, त्रिपुण्ड रमाए, जिस प्रकार कखनहरव दुःख मोर हे भोलानाथ गाते-गाते तन्मय होकर अपने आपको भुल जाता है, उसी प्रकार नव वधूको कोहवर में ले जाती हुई कलकंठी कामिनियाँ- 'सुन्दरि चललि पहुघरना, जाइतहि लागु परम डर ना' गाकर नव वरवधुके हृदयों को एक अव्यक्त आनन्द स्रोत में डुबा देती है ।

विद्यापति प्रकृति प्रेमी थे । इनके पद्यों में प्रकृति की झाकी लोभ संवरण नहीं कर सकती । अदृश्य शक्ति राधाकृष्ण का मधुर सम्वाद कोमलकान्त पदावली के रुपमें किस नर-नारी के मन को मुग्ध नही करती । ऐसे अभिनव जयदेव के क्रिडागण मठ-मन्दिर लुप्त प्रायः होते जा रहे इनके आश्रयदाताओं के निवास, के साथ-साथ इनकेद्वारा रचित रचनाओं की पाण्डुलिपि खोजकर मानवीय जीवन को गतिशील बनाने के लिए इन उपयोगी पक्षेाका व्यवस्थित व्यवस्थापन कर के आगे आने वाले सन्तति के ज्ञान बृद्धि के लिए मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है । कोकिलका काव्य क्षेत्र विशाल था क्योकीं वे परिस्थिति वश यत्र तत्र आश्रय लेते गये जैसे अपने आश्रयदाता राजा शिवसिंह को यवनो के साथ युद्ध करने जाते समय उनके आग्रह पर उनकी रानी लखिमा देवी को लेकर राजा बनौली के अधिपति पुरादित्य के संरक्षण में रहकर पुरादित्य के लिए २९९ लक्ष्मणाव्द में लिखनावली ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे तथा यहीं रहकर इन्होंने ३०९ लक्ष्मणाब्द में भागवत पोथी लिखकर समाप्त की थी । राज वनौली आज नेपाल राज्य में पडता है । "वीर भोग्या वसुन्धरा" इस उक्ति के अनुसार विद्यापति कालीन आश्रयदाताओं का राज्य एक वंशीय राजाओं के अधीन से दुसरे वंशीय राजाओं के आधीनस्थ होते हुए आज नेपाल और भारत के आधिनस्थ होकर रह गया है, परन्तु इनकी भाषा किसी एक देशका एकलौटी होकर अपना अस्तित्व वरकरार रखे हुए है । नेपाल की सरकार तथा इसके निवासियों का फर्ज वन जाता है की ऐसे प्रसिद्ध स्थलका देखभाल तथा सुरक्षा कर पर्यटकीय स्थल के रुप में विकसित करे । इस प्रकार का दायित्व निर्वाह करना भी इस शोधपत्रका प्रमुख दायितव वन जाता है ।

राजसी ठाठ के वीच रहते हुए भी विद्यापति में भोग उपभोग के प्रति विशेष झुकाव नही रहा । वे स्वाभिमानी थे । व्यक्तित्व के धनी थे । "असारे खलु संसारे धर्मएको ही निःश्चलः" को स्वीकार करके कवि ईश्वर भक्ति में पूर्ण विश्वास करते पाए गये हैं । जिस

तरह सूर, तुलसी ने भक्ति मार्ग के द्वारा अपने आराध्य देव को अपने वश में कर लिया था, वैसे ही विद्यापति भी इन दोनों से पहले शिव भक्ति कर उगना रुप में शिव को अपने यहाँ रहने को वाध्य कर दिया था । वे परपीडा से अपनेको वचाते हुए परोपकार पर विशेष वल दिया । यही कारण है कि दिल्ली सुलतान के दरवार में जाकर अपनी जान पर खेलकर राजा शिवसिंह को कारागार से मुक्त कराकर स्वदेश लौटा लाए । ऐसा कार्य विरले ही कर सकता है । आज के भौतिकवादी (नास्तिक) युग में जहाँ भौतिक वाद का ऐसी नशा चढी है कि लोग अपनी सुख सुविधा (स्वार्थ लिप्सा) के चलते माँ-वाप, भाई-वहन, सगा, सम्बन्धी परिजनो को भी न समझ अपहरण करने, वेचने और हत्या तक करने पर उतारु हो चले है । ऐसे में भगवत्सरण के सिवा और क्या वचा है जो विद्यापति ने सन्देश दिया है ।

विद्यापति का अपना एक अलग महत्व है । जैसे खग कुल में कोयल का अपना अलग पहचान है, उसी तरह कवियों के वीच विद्यापति का अपना एक अलग पहचान है । आज भी इनकेद्वारा रचित पद, नचारी, देवी वन्दना, स्तुति आदि का आज उतना ही महत्व है जितना पहले था, वडे वडे विद्वान मनिषी, साधु-सन्त, सेठ-महाजन, अवाल वृद्ध नर-नारी इनके पद्य -

करवन हरब दुःख मोर,
हे भोलानाथ ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाओल,
सुख सपनहुनहि भेल, हे भोलानाथ ।
एहि भव-सागर थाह कतहु नहि,
भैरव धरु करुआर, हे भोलानाथ ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति ।
देहु अभयवर मोहि, हे भोलानाथ ।

गाकर आत्म विभोर हो उठते हैं । "अव पछतावे का भई चिडियाँ चुगगई खेत"। के समान सांसारिक विषय वासना में फंसकर लोग अपना सव कुछ गंवा वैठता है । जव होस आता है तव सव कुछ खोया हुआ पाता है । विद्यापति भी अपनी कविता रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी । वृद्धावस्था में इस धन को देख कहते हैं -

जतने जतेक धन पापें बटोरल मिलि-मिलि परिजन खाए ।
मरनक वेरि हरि केओ नहि पूछए करम सँग चलि जाए ॥

अन्त समय में अपना शरीर भी साथ नही देता है । विद्यापति अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते है -वयस, कतह चल गेला ।

तोहे सेवइत जनम वहल तइओ न आपन भेला ॥ वयस, तुम कहाँ चले गये ? तुम्हे सेवते अपना जन्म वितादिया, किन्तु अपने न हुए । इसी पद से मिलता जुलता पद आचार्य पं. केशव दास का भी देखें-

केशव, केसन अस करी
जस अरिहुँ न करांहि ।

चन्द्र वदनि मृग नयनि वावा कहि-कहि जाँहि ॥

सांसारिक माया, मोह, इर्ष्या, द्वेष, लोभ, लालच से अपने को वचाते हुए कवि प्रभु शरण की याचना करता हैं -

तातल सैकत वारि-विंदु-सम, सुत-मित-रमनि समाज ।
तोहि विसारि मन ताहि समरपल आव होएव कोन काज
माधव हम परिनाम निरासा ।.....॥

भौतिक वाद मदान्ध हो समाज में भयावह विकृतियाँ फैलाता है । भौतिकवाद अर्जन और ध्वंस पर अधिक वल देता है सृजन पर कम । इसी सेती नेपाली भाषाके आदि कवि भानुभक्त आचार्य एक घाँस काटने वाले से प्रभावित हो परोपकार के रास्ते चला जिससे आज घर-घर में भानुभक्तीय रामायण का आदर्श पाठ हो रहा है-

घांसी दरिद्र घरको तर बुद्धि कस्तो,
म भानुभक्त धनी भैकन आज यस्तो ।

आज के सन्दर्भ में विद्यापति के पदों का वहुत ही महत्व वढ गया है । सामाजिक, सामञ्जस्य बढाने में इनके जैसा पद रचना बहुत कम मिलता है, इसी लिए इस शोध पत्र तैयारी के क्रम में राष्ट्रिय धर्म नीति, आध्यात्मिक सद्ग्रन्थ, मिथिला महात्म्य, ऐतिहासिक

साक्ष्य, सामाजिक प्रचलित उक्तियाँ, विद्वद्वर्गो की सर सल्लाह परम्परागत किम्वदन्तियाँ, वृद्ध-वृद्धा की धारणा, स्थलगत निरीक्षण, मठ मन्दिरका अवलोकन, सभा सम्मेलनद्वारा प्राप्त विषयवस्तु, पत्रकारोंका दृष्टिकोण, मिथिला का रीतिरिवाज, वेशभूषा, लोकगीत, कला कौशल के साथ अन्य श्रोत को भी इसमें रखने का प्रयास किया गया है । इस शोध पत्र के जरिए इसे वृहत अनुसन्धान मूलक वनाने की सोच भी रकखी गयी हैं । "कि दुंर व्यवसायिनाम" जीविकोपार्जन और अर्थोपार्जन के लिए लोग अपनी सुविधानुसार आने जाने और वही घर वनाकर रहने भी लगे हैं । इस कममें उनके लिए स्वदेश और विदेशका फर्क नही रह जाता फिरभी वे इस वात में विल्कुल सतर्क रहते हैं कि अपनी भाषा, संस्कृति, रीति, रिवाज, पर्व, त्यौहार और मूल स्थान से सम्वन्ध वना रहे । इस विषय में औरते अधिक सतर्क रहती है । यही कारण है कि नेपाल भारत के प्रमुख शहरो तथा अन्य मूलको में भी मांगलिक कार्यो के अवसर पर विद्यापतिद्वारा रचित देवी वन्दना, स्तुति सहित अन्य पदों का गायन करते है । जिसके चलते विद्यापति के पदां के माध्यम से मैथिली भाषा, संस्कृति, वेशभुषा, रीति रिवाज, पर्व त्यौहार का प्रचार प्रसार हो रहा है ऐसे में विद्यापति सम्बन्ध विस्तार के सेतु रुप में कामकर रहे हैं जो एक जनप्रतिनिधि के कार्यक्षेत्र में पडता है ।

विद्यापति पर किए गये इस शोध पत्र के जरिए नेपाल भारत के वीच सामाजिक, साँस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक सम्वन्ध मजवूत होंगे । हिन्दी के पाठ्यक्रम में भक्ति कालीन कवियों की श्रेणी में विद्यापति का नाम प्रथम कोटि में रखा गया हैं । हिन्दी भाषा भाषी इन्हे अपना कवि मानते आरहे है यह एक सौभाग्य की वात हैं । इन सव वातों कों ध्यान में रखकर यह शोधपत्र तैयार किया गया है । आज के सन्दर्भ में विद्यापति का महत्व वहुत वढ गया है । क्योंकिं कुशल जनप्रतिनिधि का अभाव सारे सामाजिक वातावरण को आन्दोलित कर रहा है इस शोधपत्र के द्वारा सामाजिक सद्भाव, आपसी मेल-मिलाप के साथ विकृति और कुरीति को समाप्त किया जा सकता है ।

१.७ तथ्यांक संकलन विधि

तथ्यांक संकलन के क्रम में मिथिलांचल के यथाशक्य स्थानो में जाकर विषय सम्वन्धित व्यक्तियो से सम्पर्क किया गया । जनकपुर के विद्यापति चौक तथा विहार राज्य के दरभंगा स्थित ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय चौक के परिसर में रहने वाले ४-५ साहित्यकारो के वीच पूर्व परीक्षण प्रश्नावली पूछा गया था साक्षात्कार के माध्यम से

प्रश्नावली भरपूर था । अर्न्तविक्षा मैथिली विशेषज्ञ, विज्ञ साहित्कार, प्रवचन कर्ता विद्यापति पदावली के प्रशंसक (महिला, पुरुष) संघ संस्था, कवि लेखक, तथा पत्रकारों एवं सर्वसाधारण से लिया गया था । इसी क्रम में सम्वन्धित पुस्तकें, पत्र पत्रिकाएँ, दैनिक पत्रिकाएँ, लेखों आदि अन्य श्रोतों को आधार बनाकर प्रश्नावली तैयार किया गया था ।

१.७.१ प्राथमिक स्रोत

विद्यापति को जन प्रतिनिधि कवि के रुप में दिखाने के लिए उनकेद्वारा रचित रचनाओं के आधार पर प्राथमिक स्रोत का् तीन श्रेणी में रखकर तथ्यांक संकलन किया गया है । इस क्रम में ऐतिहासिक मर्मज्ञ के आधारपर श्रृगारिक पक्ष भक्ति पक्ष तथा तत्कालीन सामाजिक कुरीतियो से सम्बन्धित पक्ष है । इसमें ऐतिहासिक मर्मज्ञ वरिष्ठ पत्रकार श्री राजेश्वर नेपाली, श्रृंगारिक पक्ष के समर्थनका रा.रा. व.क्याम्पस के मैथिली विभाग के अध्यक्ष प्रा.डा. पशुपति झा, भक्ति पक्ष के समर्थन प्रा. श्री यदुनन्दन झा तथा सामाजिक विकृति को हटाने में सक्रिय भूमिका निर्वाह करने के रुप में विद्यापति को सम्झनेवाली प्राध्यापिका डा. आशा सिन्हा एवं अन्य मर्मज्ञों सें स्वयं तथा अन्य व्यक्तियो को पठाकर लिएगये तथ्य संकलन का विषय वस्तु तथा अन्य आधार निम्नाकिंत हैं -

१. ऐतिहासिक तथ्य संकलन के आधार पर विद्यापति की जीवनी, शिक्षा, दिक्षा
२. आश्रय दाताओं और उनके आग्रहपर रचित रचना तथा काव्य
३. श्रृगारिक पक्ष की मान्यताएँ
४. भक्ति पक्ष की विशेषताएँ
५. सशक्त लेखनीद्वारा सामाजिक कुरीतियों को जन समक्ष लाकर उसे दूर करने का महत्वपूर्ण प्रयास
६. इनमें कोमल कान्त पदावली का प्रसार और प्रचार
७. इनमें संगीतात्मक लयों से प्रभावित कवि लेखक तथा विशेष व्यक्तित्व
८. नेपाली भाषापर विद्यापति के पदों का प्रभाव/स्रोत सर्वेक्षण वैशाख-आषाढ २०६९

प्राथमिक सूचना जानकारी संकलन कर्ता स्वयं प्रश्नावली के माध्यम से किया है । इसमें मिथिलांचल के लब्ध प्रतिष्ठित प्रा.डा. पशुपति झा, प्रा.डा. आशा सिन्हा, डा. राजेन्द्र विमल, प्रा. श्री यदुनन्दन झा, डा. वृजकिशोर ठाकुर, वरिष्ठ पत्रकार श्री राजेश्वर नेपाली, प्री. ताराकान्त झा, वालकृष्ण उपाध्याय, प्रा. पं. उग्रानन्द प्रतिहस्त के साथ-साथ अप्पन

मिथिला, जलेश्वर नाथ, रुद्राक्ष रेडियो, रेडियो जनकपुर, मिथिलांचल जानकी जनकपुर मिथिला आदि एफ.एम के संचालकों से सम्पर्क कर कविकोकिल विद्यापति के वारे में जानकारी ली गयी हैं ।

१.७.२ द्वितीय स्रोत

अध्ययन को और विश्वसनीय वनाने के लिए मुख्य सूचना तथ्यांक द्वितीय श्रोत से इकट्ठी की गई है । इस स्रोत के अन्तर्गत विभिन्न निजी तथा सामाजिक स्तर के संघ संस्था, उनके द्वारा प्रकाशित लेख, व्यक्तिगत लेख, कविता, नाटक, तथा रचना आदि है । आज लोग अपनी भाषा, संस्कृति और भेष भूषा के प्रति जागरुक हो रहे हैं । मिथिलांचल में भी अनेको संस्थाएँ है जो मैथिली भाषा के आदि कवि को आगे लाकर मैथिली भाषा को राष्ट्रिय तथा अन्तराष्ट्रिय स्तर में पहचान कराना चाहती है । मैथिली भाषा प्रवर्द्धिनी, मिथिला सांस्कृतिक विकास केन्द्र महोत्तरी, जलेश्वर, मिथिला कला केन्द्र मधुवनी (विहार) कविकोकिल अध्ययन केन्द्र दरभंगा (बिहार) के द्वारा गोष्ठी प्रवचन, अनुसन्धानात्मक कार्य होते ही रहते है । इन सवों से मिलकर तथ्य संकलन किया गया हैं । मिथिलांचल में जहाँ कहीं साहित्यिक गोष्ठी होती है तो विद्यापति उसमें मुख्य रुप में अपना स्थान ले लेते है । ऐसे में अध्ययन के लिए यह द्वितीय स्रोत अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है ।.....के द्वारा भी इस में सहयोग प्राप्त किया गया है । अध्ययन द्वितीय स्रोत में विवाह, व्रतवन्ध, पर्व, त्यौहार सहित अन्य मांगलिक अवसर पर औरतों द्वारा गाये गये पदों से भी वहुत सहयोग प्राप्त हुआ है ।

१.७.३. प्रश्नावली

प्राथमिक तथ्यांक संकलन के लिए कुछ सरल प्रश्न तैयार करके लोगों में वाटा गया था । इस तरह के प्रश्न अनुसूचि १ में समावेश किया गया है । इस तरह के प्रश्नो में विद्यापति के वारे में जन साधारण की धारणा, विद्यापति के रचनात्मक दृष्टिकोण काव्यगत मौलिकता, मिथिला की सामाजिक व्यवस्था, रीतिरिवाज और कुरीति के प्रति उनकी धारणा सहित विद्यापति को किस श्रेणी का कवि माना जा सकता है । इसी तरह मैथिली भाषा की अवस्था कलाकौशल का स्तर, विद्यापति के पदों में छन्द, अलंकार तथा रसों का स्थान, वन्दना, स्तुति तथा नचारी का सामाजिक मान्यताओं से जुडा हुआ प्रश्न भी था ।

विद्यापति के पद्यों का आधुनिक लेखक और साहित्यकारों पर प्रभाव भी इसमें सामिल किया गया था । प्रश्नो का उत्तर स्थानीय व्यक्तित्व, सम्वन्धित विशेषज्ञ, साहित्यकार, गवैया, गायिका, शिवालय के पुजारी आदि मर्मज्ञ लोगों से लिया गया था । वच्चे और वृद्ध वृद्धा भी अपनी अपनी अभिरुचि दिखाने से न चुके थे ।

१.७.४ गोष्ठी तथा समारोहद्वारा:

तीसरा तथ्यांक संकलन महोत्तरी जिला के सदरमुकाम जलेश्वर के रंगशाला में किया गया था । गोष्ठी की अध्यक्षता प्रा. आशा सिन्हा ने किया । इस गोष्ठी में विभिन्न जगहो से आए साहित्यकार, कवि, लेखक, प्राध्यापक, शिक्षक, नागरिक समाज, छात्रछात्रा तथा पत्रकार लोग भी थें । गोष्ठी में विद्यापति की रचनाओं तथा कविता संग्रहों की व्यवस्था, सुरक्षा करने के उपाय सुझाए गये । उनकी कृति को जनस्तर तक पहुँचाने की अवाजे भी गूँजी । आश्रय दाता राजाओं की वंशावली की सूचि तैयार करने की वातें भी मौखिक रुप में रकखी गई । विद्यापति से सम्वन्धित फिल्म वनाने की धारणा भी आयी ।

१.८ तथ्यांक तथा सूचना का स्रोत

प्राथमिक तथ्यांक और द्वितीय तथ्यांक के आधार पर यह अध्ययन (शोधपत्र) तैयार किया गया है ।

१.९ तथ्यांक प्रशोधन तथा विश्लेषण

इस में कुछ तालिकाएँ इस प्रकार है -

विद्यापति वंशावली, आश्रयदाता राजाओं का विवरण, संस्कृत सम्वन्धी रचना, पदावली, श्रृंगारिक, भक्तिपरक तथा सामाजिक कुरीति परक। विद्यापति की रचनाओं का अन्य भाषा कवि यो पर प्रभाव तथा महत्व सम्वन्धी तथ्यांक विवेचना के आधार पर अध्ययन करके तैयार किया गया है । तालिकाएँ सम्वन्धित भाग में विवेचना सहित प्रस्तुत किया गया है ।

संकलित तथ्यांक सूचनाओं का विवेचना करने में साधारण तथ्यांकीय साधनो का प्रयोग भी कुछ मात्रा में होना स्वभाविक ही हैं ।

परिच्छेद २

मिथिला राज्य की स्थापना

२.१ मिथिला राज्य स्थापना पूर्वका ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः

पृ. विष्णु पुराण के अनुसार मिथिला राज्य स्थापना से पूर्व अयोध्या पति इक्ष्वाकु महाराज का कनिष्ठ पुत्र कुमार "निमि" अपने वडे भाइ ककुत्स से नाराज होकर अवध प्रदेश को त्यागकर तिरहुत के परम प्रसिद्ध तपस्वी महर्षि गौतम के आश्रय में आए । रावण के अत्याचार से दु:खी ऋषि गण सूर्यवंशी राजकुमार "निमि" के आगमन को शुभ संकेत मानते हुए वहुत प्रसन्न हुए । महामुनि जमदग्नि और गौतम ऋषि के उच्चतम शिक्षा दीक्षा से राजकुमार निमि प्रभावशाली राजर्षि के रुप में अग्रपंक्ति में आ खडे होने वाले निमि को ऋषि मुनियो ने उन्हे तिरहुत का राजा वनाकर सिंहासन में वैठा दिया । राजा निमि अपने प्रभाव से रावण तो कया इन्द्र को भी भयभीत कर दिया । निमि के शासन काल में तिरहुत प्रदेश स्वर्ग की छवि को भी गौण कर दिया ।

एक वार यज्ञ सम्वन्धी विवाद के चलते महर्षि वशिष्ठ और राजर्षि निमि आपस में एक दुसरे को श्राप देकर शारीरिक चेष्ठा को त्याग दिया । इस तरह राजा विहीन राज्य को देखकर ऋषि गण दु:खी हुए । राजा नही रहने पर देश में उपद्रव होगा शत्रुराजा आक्रमण कर देगें । देश पराधिन हो जाएगा । यह सोचकर ऋषिमुनि सव मिलकर देवताओं को प्रार्थना करने लगे । देवताओं की कृपा से मृत्यु प्राप्त राजा निमि पुनर्जीवित हो गये परन्तु उन्होंने देवताओं से कहा हे प्रभो आत्मज्ञानी मुनि जन शरीर त्यागोपरान्त भगवत्शरण में लीन हो जाते है । अत: अव मुझे पुनर्जन्म की इच्छा नही है । यह कहते हुए राजा पुन: मृत्यु को प्राप्त हो गये । राजा के मृत शरीर को देख ऋषि जन अनिष्ट की चिन्ता से व्यग्र हो शास्त्रोक्त विधान से राजा के मृत शरीर को मथने लगे । मंथन विधि के कारण एक दिव्य वालक का जन्म हुआ जो मिथिल नाम से विख्यात हुआ इस प्रकार स्वयं उत्पन्न होने के कारण जनक, विगत शरीर से जन्म होने से विदेह तथा मंथन से उत्पन्न होने के कारण मिथि नाम से वे जगत में प्रसिद्ध हुए ।

२.२ मिथिला राज्य की स्थापना

वालक मिथि का पालन पोषण और शिक्षा दिक्षा महर्षि गौतम के सानिध्य में हुआ । वहुत कम उमेर में मिथि सभी शास्त्रो में पारंगत हो प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व के रुप में चर्चित हो गये । राज्य रोहण के वाद मिथि ने अपने नाम से मिथिला राज्य की स्थापना की । चतुर राजा मिथि ने अपने राज्य की सीमा विस्तार कर प्रजापालन में तत्पर हो ऋषिमुनियो की सेवा विद्वत् वर्गको आदर और सम्मान से विभूषित करने लगे । इस प्रकार तिरहुत नरेश राजा मिथि सर्व प्रथम मिथिला का राजा होकर जनक, विदेह, मिथिलेश नाम से ख्याति प्राप्त राजा हुए । राजा मिथि एक प्रतापी राजा हुए । वे एक चमत्कारी राजा थे । उनके समय में मिथिला संस्कृत शिक्षा का केन्द्र काला कौशल से पूर्ण एक अद्वितीय राज्य के रुप में उदित हुआ । यत्रतत्र स्वाध्याय यज्ञ, तप, हवन, प्रवचनादि मांगलिक कार्य होने लगे थे । किसी में एक दुसरे के प्रति शत्रुता नही रहने के कारण यह मिथिला अजात शत्रु के नाम से विख्यात हो गया ।

मध्यन्ते रिपवः (काम, क्रोध, लोभ, मोहादयः यत्र सा मिथिला मिथिलादयश्च उ.सु. ५० पृ. विष्णुपुराण मिथिला खण्ड)

२.३ मिथिला राज्य की सीमाः

राजा मिथि ने अपने वाहुवल के द्वारा मिथिला राज्य की सीमा का विस्तार किया:

गंगा हिमवतोर्मध्ये नदी पञ्च दशान्तरे ।
तैर भूक्तिरिति ख्यातः देशः परम पावनी ॥

इस प्रकार मिथिला राज्य के दक्षिण में गंगा, पूर्व में कोशी, पश्चिम में गण्डकी तथा उत्तर में हिमालय तक का भू भाग था । उत्तर में हिमश्रृंखला, दक्षिण में मैदानी भू भाग राजा महाराजाओं, ऋषिमुनियो, साधु सन्मासियों, तथा रसिक साहित्यकारो के लिए मनोहर स्थल के रुप में प्रसिद्ध हो चला था ।

२.४ मिथिला वंशीय राजाओं का क्रमबद्ध नाम तालिका

क्र.स.	नाम	पदवी	
१.	राजर्षि निमि	राजर्षि	तिरहुत राज्य का संस्थापक
२.	मिथिला महाराज	मिथि, जनक, विदेह	मिथिला राज्यका संस्थापक
३.	जनक	जनक (प्रजा वत्सल)	प्रथम जनक
४	उदावसु		
५.	नन्दिवर्द्धन		
६.	सुकेतु		
७.	देवरात		
८.	बृहद्रथ		
९.	महावीर		
१०.	सुधृति		
११.	धृष्ट केतु		
१२.	हर्षश्व		
१३.	मरु		
१४.	प्रतीन्धक		
१५.	कीर्तिरथ		
१६.	देवमीढ		
१७.	विवुध		
१८.	कही धक		
१९.	कीर्तिशत		
२०.	महारोमा		
२१.	स्वर्ण रोमा		
२२.	ह्रश्वरोमा		
२३.	सिरध्वज	राजर्षि, विदेह, जनक	महाज्ञानी, दार्शनिक, विचारक सीता के पिता

२.५ मैथिली भाषा परिचय

२.५.१ मैथिली भाषा

मिथि राजाद्वारा स्थापित मिथिला राज्य की अपनी स्वतन्त्र भाषा लिपि रही हैं । इनका कला, कौशल, चित्रकारी, रीति रिवाज, पर्व त्यौहार, खान पान, वेश भूषा, गीत संगीत, शान सौकत विश्व में अतुलनीय है । जहाँ हिन्दी नेपाली की अपनी स्वतन्त्र लिपि नही हैं । वहीं मैथिली भाषा की शदियो पुरानी लिपि (मिथिलाक्षर) आज तक विद्यमान है । इस भाषा को वोलने तथा जानने वालो की संख्या स्वदेश तथा विदेश में मिलाकर करीव ५-६ करोड की हैं । राज्य संरक्षण का अभाव अर्थ की कमी, सामाजिक उदासीनता तथा आधुनिकता के नशा में इस की अपनी लिपि ओझल में पडती जा रही हैं । कवि कोकिल विद्यापति ने इस भाषा की मधुरता कोमलता में चार चाँद लगादिया है । राज्य पक्षीय उदासीनता के वावजूद मिथिला की ललनाओद्वारा यह भाषा आज तक सुरक्षित रही और आगे भी रहेगी ।

२.५.२ मैथिली भाषा के आदि कवि

इस भाषा के आदि कवि अभिनव जयदेव, कवि कोकिल विद्यापति है। जिन्होने इस भाषा में गीत संगीत , कविता, स्तुति, नचारी, वन्दना, वट्गमनी, उदासी आदि के साथ अन्य मांगलिक अवसरो पर गाये जाने वाले गीतों की रचनाकर मैथिली भाषा को ऐश्वर्य और सौन्दर्य रुप को स्थापित किया हैं ।

२.६ विद्यापति के आश्रयदाता राजाओं का क्रमबद्ध नाम तालिका

क्र.सं.	नाम	पदवी	
१.	गणेश्वर		
२.	कीर्तिसिंह		
३.	देव सिंह		
४.	शिव सिंह	लखिमा	
५.	पुरादित्य		राजा वनौली के अधिपति
६.	पद्यसिंह	विश्वास देवी	शिव सिंह का भाइ
७.	हरि सिंह	धीरमति	पद्यसिंहका उत्तराधिकारी
८.	नरसिंह देव		
९.	धीर सिंह		

जनप्रिय कवि विद्यापति काव्यका महत्वपूर्ण पक्ष

कविद्वारा की गई रचना कविकृत वा काव्य कहलाता है । काव्यके दो प्रमुख पक्ष होते है - गद्य रचना और पद्य रचना । पद्य रचना लय युक्त वाचन करने की परिपाटी है । इसके लिए रस, अलंकार, मात्रा और छन्दपरक विशेष ध्यान दिया जाता हैं । भाषा शैली का प्रयोग तो इसके विशेष चमत्कार के साथ कोमल कान्त पदावली में आता है । काव्यका महत्वपूर्ण पक्ष अलंकार, रस भाषा शैली और उद्देश्य है ।

१. अलंकार

अलं क्रियते, समलंक्रियते इति अलंकारः । अलंकारका शाब्दिक अर्थ होता है भूषण आभूषण, गहना, शोभायुक्त परिधान, वाग्विलास और मधुर भाव । कवि विहारी ने इस के सम्वन्ध में इस प्रकार लिखा है - भूषण विनु न विराजइ कविता, वनिता मित्त । कविता के लिए कोमल भाषा मधुर भाव और हृदयग्राही हाव भाव जरुरी है तो नारी के लिए आकर्षक परिधान तथा मित्रों को आकर्षित करने के लिए मधुर सम्भाषण होना आवश्यक होता है । विद्यापति रस सिद्ध कवि थे । अलंकार शास्त्र के ज्ञाता थे । कवियो के वीच कवि कोकिल थे । विद्यापति भावूक कवि थे तो उनका काव्य भावका निरुपण। विद्यापति जितने भावूक थे उतनी ही अभिव्यञ्जना की क्षमता रखते थे । विद्यापति सौन्दर्योपासक थे । इनका प्रेम काव्य राधा कृष्ण विषय से युक्त निश्छल गीत काव्य स्वतः अलंकार युक्त है । ये अलंकार के पिछे न पडे वल्की अलंकार ही इनके पीछे पीछे आते रहे ।

अप्रस्तुत योजना-

भारतीय परम्परा में अप्रस्तुत योजना मूलतः प्रतीक उपासना का परिधि है । नारी के सौन्दर्य वर्णन में कवि कालिदास के वाद स्वतः स्थान प्राप्त कर लिया है । इनके मनोरम कल्पना में उपमा, उत्प्रेक्षा, रुपक, अनुप्रास अप्रस्तुत उन्मीलित, विशेषोक्ति, दृष्टान्त, अर्थानतरन्यास, भ्रान्तिमन सन्देह काव्यलिंग, विभावना, व्यतिरेक, समासोक्ति, पर्यायोक्ति आदि प्रचलित अलंकारोका अनायास प्रयोग हुआ है । विद्यापति प्रतिभासम्पन्न, चमत्कारीक कवि थे । यही कारण है कि इनके काव्य में अलंकारो की उपस्थिति अनायास होती रही । उदाहरनार्थ देखें -

माधव ! कि कहव सुन्दरि रुपे ।
कतेन जतन विहि आनि समारल
देखल नयन सरुपे ॥
पल्लव राज चरन जुग सोभित,
गति गजराजक भाने ।
कनक कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु सामने ॥
मेरु उपर दुइ कमल फुलाएल
नाल विना रुचि पाई ।
मनिमय हार धार वहु सुरिसरि
तंह नहि कमल सुखाई ॥
अधर विम्व सन दसन दाडिमें विजु
रवि ससि उगथि पासे ।
राह दूर वस निअरो न आवथि
तै न करथि गरासे ॥
सारंग नअन बअन पुनु सारंग
सारंग तासु समधाने ।
सारंग उपर उगल दस सारंग
केलिकरथि मधुपाने ॥
भनई विद्यापति सुनु वर जउवति
एहन जगत नहि आने ।
राजा शिव सिंह रुपनरायन
लखिमा देइ पति भाने ॥

विद्यापति कवितावली

इस पद में अलंकारों की झडीं सी लग गई है । वैसे तो विद्यापति अलंकार के पिछे नही दौडे है । वल्की अलंकार ही उनके पदो में स्थान पाने के लिए छलांग लगा दी है । विद्यापति के अप्रस्तुत योजना का मुख्य आधार उपमान है । उपमान के प्रयोग में कवि वडे साकांक्ष रहते थे । यही कारण है कि राधा के रुप चित्रण में कवि ने कुशल मणिकार के सदृश

उपमान का प्रयोग किया है । कवि ने अपने काव्य में विशेषण का भी प्रयोग सफलता के साथ किया है । उक्ति प्रयोग में भी लोक जीवन के मार्मिक और परम्परा के सत्य पक्षका निरुपण किया है ।

रससिद्ध महाकवि

विद्यापति रस सिद्ध महाकवि के रुप में सर्व स्वीकार्य है । इनके काव्यगत सरसता स्वयं सिद्ध है । विद्यापति सौन्दर्य वोध में कवि कालिदास के प्रतिस्पर्धि प्रतीत होते है । प्रेम का उदय ही उनके काव्य की विशेषता है । राधा कृष्ण के श्रृंगार गान में प्रेम निष्पत्ति रस रुप में हुई है । सम्भोग और विप्रलम्भ इसके उभय पक्षोका नियोजन उसकी चरितार्थ और परिपूर्णता का महत्वपूर्ण संयोजन इनके काव्य में हुआ है । विद्यापति श्रृंगारिक कवि थे । संयोग और वियोग पक्षका अद्‌भुत चित्रण हुआ है इनके काव्य में । अपने अभिव्यक्ति के क्रम में उन्होने नायक नायिका भेद, नख शिख, विविध संभोग संयोग वियोग जन्म स्थिति और अवस्था का सफल निरुपण किया । उनके गीतो में पूर्व राग, मिलन, मान, दूती प्रसंग, अभिसार, विरह, पुनर्मिलन आदि का क्रम विभाग भी हुआ है । प्रेम, मिलन, अभिसार, मान, विरह आदि सवों में जव जिसके. अनुकूल जो कुछ होना चाहिए वह सव उनके पद में वही हुआ है । इनका अन्तिम काव्य शान्त रस से परिपूर्ण है । इस प्रकार इनका काव्य रस युक्त सहृदयो के हृदय में सहज रुप में ग्रहण योग्य विविध गुण एवं अलंकारो से युक्त है ।

भाषाशैली

“देसिल वयना सव जन मिट्ठा” - के मर्म स्थल को स्पर्श करने वाले कवि विद्यापति की भाषा कोमल कान्त पदावली के रुप में सर्व सुलभ, सरल, सुवोध, गीत लययुक्त, तत्सम और तद्‌भव शव्द युक्त जन जन के मन को गुद गुदाने वाली भाषा शैली है । विशेषण मण्डित मनिता युक्त इनकी शैली सर्वग्राह्य है । कही कही भाषा वोझिल सी लगती है । दृष्टकुट में प्रयोग किए गए शव्द क्लिष्ट हो गये है । सर्व साधारण के समझ से वाहर लगते है । कुछ दुरुहता आने पर भी इनकी गीत भाषा शैली सर्वसुलभ और ग्राह्य है । इसी से तो कवि अनेक उपनामों से विभूषित है ।

उद्देश्य

विद्यापति ने अपने पूर्ववर्ती कवियो के आदर्श मार्ग का अनुशरण करते हुए अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति जागरुक रहते हुए निष्ठा साथ कलम चलाए । सामाजिक कुरीतियाँ दूर करना । गीति काव्य के माध्यम से प्रेम साहित्यको जन मानस तक पहूचाना । राधाकृष्ण के माध्यम से सौन्दर्यपरक होने का सन्देश देना । नारी के मनोगत भाव को उजागर करना और उनके साथ हो रहे विभेद नीति को समाप्त करना । जनसमुदाय में अपनी भाषा, संस्कृति राष्ट्र और अपने धर्म के प्रति अटल विश्वास रखने का सन्देश देना । कर्म के प्रति निष्ठावान रहते हुए इश्वर के प्रति आस्थावान रहना । इस प्रकार कवि ने एक आपस में सहयोग के साथ जीवन को अमृतमय वनाने के लिए नर नारी के वीच नैसर्गिक प्रेम का वहुत वडा महत्व दर्शाया है ।

गीतिकाव्य के विकास में विद्यापति का योगदान

साहित्य विधाओं में गीतिकाव्य का वहुत वडा महत्व रहते आया है । गीतिकाव्य परम्परा संस्कृत साहित्य का देन है । यह प्रकृति ही प्रेम पथ गामिनी है । प्रकृति का हर वस्तु प्रेम सन्देश देती आ रही है "प्रेम जगत में सार और कुछ सार नही हैं" प्रेम अन्तर्निहित होता है और गीति काव्य उस अन्तरात्मा की गुदगुदाहट होती है । यह नैसर्गिक तत्व है । कृत्रिमता तो इसके विकास में वाधक होता है । गीति गायन है जिसका संग्रहित रुप गीति काव्य कहलाता है । गीति गायन अपनी मधुर ध्वनि से श्रोताओ को मंत्र मुग्ध कर व्रह्मानन्द का आनन्द प्रदान करती है । वैदिक काल से लेकर यह विद्या लोगो को मनोरंजन प्रदान करती आ रही है । सामवेद में इसके अंकुर प्रस्फुटित होते दिखाई पडते है । भागवत में कृष्ण चरित राम लीला आदि में वंशी का मधुर ध्वनि गीतिकाव्य का प्राण है । गीत और नृत्य मानव विकास के साथ साथ विकसित होता आया है । भारोपिय परिवार की वोली या भाषाएँ संस्कृत से ही इस परम्परा को आत्मसात की है ।

विद्यापति संस्कृत के पण्डित प्राकृत और अपभ्रंश के मर्मज्ञ तथा मैथिली भाषा के मधुर गायक कवि थे । लोक भाषा के मिठास से परिचित थे । "देसिल वयना सव जन मिट्ठा" से वे ओत प्रोत थे । अनेक रचनाओं के वावजुद उन्हे मैथिली पदावली जो (विद्यापति पदावली के नाम से प्रसिद्ध है) ख्याति मिली । विद्यापति भावूक थे । सहृदयी थे । कवित्व के

गूढ रहस्य को जानते थे । संगीत के मर्मज्ञ थे । राग रागनी रस अलंकार मात्रा छन्द और लय के पारखी थे । स्व रचित पद गाते गाते झुम उठते थे । वैसे तो विद्यापति के गीति काव्य पर जयदेव रचित गीत गोविन्द का अमिट छाप दिखाई पडता है । तथापि विद्यापति जयदेव से प्रभावित होते हुए भी कवि कुल गुरु कालिदास से भी वहुत प्रभावित थे । कालिदास रचित कुमार सम्भव का छाप इनके काव्य कृति पर है । विद्यापति के गीत काव्यका भाव, रस और प्रकाश भंगीमाका स्रोत संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश के मुक्तक प्रेम कविताएँ है । महाकवि जयदेव रचित गीत गोविन्द का गणना गीति काव्य प्रवन्ध के रुप में होता है तो विद्यापति का गीत मुक्तक काव्य के रुप में ।

गीति काव्य का पूर्ण विकास विद्यापति के काव्य में देखा जा सकता है । जयदेव रचित गीत गोविन्द लोक प्रचलित राधाकृष्ण लीला का व्यवस्थित गीत रुप है । विद्यापति अपने काव्य में इस प्रेमोन्मादिनी लीला का रस मय वर्णन किया है । रुप, रंग, आकृति, प्रकृति, आश्रय और विषय सव दृष्टि से विद्यापति पर जयदेव का प्रभाव है इसी लिए इन्हे अभिनव जयदेव की उपाधि मिली है । वैसे तो गीत गोविन्द संस्कृत में रचित रचना है । लेकीन उसके भाषागत सुकुमारता पदलालित्य की सुन्दरता इस कोटिका है कि उसे सहज ही भाषा की रचना कही जा सकती है । वस्तुतः गीत गोविन्द देववाणी में गुञ्जित लोक वाणी की प्रतिध्वनि है । परन्तु विद्यापति रचित गीत सद्यः लोक वाणी में स्फुट हुआ है । जयदेव से साक्षत प्रेरणा ग्रहण करते हुए भी विद्यापति में अपनी नीजी मौलिक विशेषताएँ है । जहाँ जयदेव नायक के चरित्र का उत्कर्ष दिखाया है वही विद्यापति ने अपने गीतों में प्राय नारी के उत्कर्ष का वर्णन किया है । जयदेव की राधा प्रारम्भ से ही विलास वती पूर्ण यौवना और कामज्वर पीडिता है तो विद्यापति की राधा पहले किशोरी फिर प्रेम मयी तरुणी और अन्त में प्रौढा उपेक्षिता है । राधा के इस रुप में जोर दिव्यता है उस से अधिक सहजता । जयदेव और विद्यापति से पहले ही राधा और कृष्ण लोक गीत के माध्यम वन चूके थे । यही कारण है कि विद्यापति का कृष्ण जनजीवन से उद्धृत सामान्य नायक प्रतीत होते है तो राधा इसी लोकवाणी की स्मरणीय नायिका । इसी लिए विद्यापति का काव्य लोक काव्य के रुप में गृहित हुआ इनकी रचना गीत सहज और मानवीय रुप में प्रतिष्ठित हआ ।

काव्यरुप

महाकवि जयदेव का गीत गोविन्द प्रवन्ध काव्य में आता है वही विद्यापति का गीत काव्य मुक्तक काव्य के रुप में । विद्यापति में कवित्व शक्ति अप्रतिम था । उनके कतिपय गीतो में केवल रुप वर्णन हुआ है तो किसी में उद्दीपन मात्राका विन्यास है । किसी किसी में केवल संचारी भाव का निरुपण हुआ है फिर भी यह विद्यापति का चमत्कार ही कहे जो एक ही तत्व से दुसरे तत्वका भी आक्षेप हो जाता है । तथापि रस स्वादन में तनिक भी वाधा व्यवधान नही होता । ध्वन्यालोक (उद्योत-३) में अमरुक के मुक्तक प्रसंग में आनन्द वर्द्धन का जो उक्ति है - "अमरुकस्य कवेर्भुक्तका: श्रृंगार रसीयस्यन्दिन प्रवन्धायमाना प्रसिद्धा एव अर्थात इस मुक्तको से श्रृंगार रस की मन्दाकिनी उसी तरह स्पन्दित होती है जैसे प्रवन्ध काव्य से । यह विद्यापति के गीत प्रसंग में अच्छी तरह चरितार्थ है "।

गीतकाव्य की परिभाषाएँ

गीत काव्य के सम्वन्ध में विद्वानो ने अपने अपने ढंग से इसे परिभाषित किया ह्वै । रस, छन्द, मात्रा और लय मिश्रित सुबोध सरल कोमल कान्त पदावली जो गेय रुप में गायी जाती है उसे गीत कहते है । उसी का परिभाषित रुप गीति है । कवि कृति काव्य कहलाता है । इस प्रकार गीति काव्य गीतमय रचना है । कोकिल तानवत लोकभाषा में मधुर भाव तरंगित करना ही गीति काव्य है । गीतका परिष्कृत रुप संगीत कहलाता है । प्रेम का स्वच्छन्द वा उन्मुक्त उदवोधन ही गीतिकाव्य कहलाता है । श्रान्त कलान्तावस्था में ताजगी प्रदान करने के लिए जो स्वर लहरी अनायास फूट पडती है वही मुग्ध भाव गीति रुप में प्रस्फुटित होकर कमिक रुप में गीति काव्य कहलाता है । कवि द्वारा लोक वाणी में मर्मस्पर्शी शव्द चयन कर कलकंठी वत गेय गीत ही गीति काव्य है । गीति काव्य स्वच्छन्द और मुक्त काव्य धारा है जो कृतिमता से पृथक रह जन जन में स्वयं प्रवाहित होती है । यह सहज और मानवीय होता है । जनमानस को रसप्लावित करना ही गीतिकाव्य का उद्देश्य है । गीतिकाव्य परम्परा वैदिक काल से ही देखने को मिलता है । जड चेतन ने इस परम्परा में गति प्रदान की है । सामवेद की ऋचाओ में गीति जन्य भाव परिलक्षित होता है । राम लीला रास लीला के साथ भागवत में श्रीकृष्ण चरित वर्णन में गीति गेय के रुप में गायन हुआ है । संस्कृत साहित्य में यह परम्परा जयदेव रचित गीत गोविन्द में चरमोत्कर्ष

को प्राप्त किया है । मैथिली भाषा के कलकंठी कवि गीत गोविन्दको आधार मानकर चले । वैसे तो वे आदि शंकराचार्य द्वारा रचित स्तुति परक गीतो से भी प्रभावित रहे । भजु गोविन्द भजु गोविन्द गोविन्दम् भजु मूढमते आदि । विद्यापति का गीत मुक्तक है । गीति काव्य का पूर्ण प्रतिष्ठापन इनके गीतिकाव्य में हुआ है । गीति काव्य में पद की गेयता तीव्र भावानुभूति तथा सुकुमार शव्द का ललित अभिरुची उसके विशेष लक्षण के रुप में स्वीकार किया गया है । अतः गेयता एक प्रमुख प्रवृत्ति होती है । विद्यापति में गीति काव्य स्वतः सिद्ध है । जव गीत गायी जाती है तव सरसता का श्रोत स्वयं प्रवाहित होने लगता है । राधाकृष्ण के हृदय में उमडते भाव को परखने की विलक्षण क्षमता थी उनमें । गीति काव्य के लिए सरल सरस और सुकोमल भाषा अनिवार्य समझा जाता है । जो अभिनव जयदेव के काव्य में सहज प्राप्त है । विद्यापति की भाषा में अप्रतिम माधुर्य है । शव्दार्थ सुकुमार अभिव्यक्ति में वे अतुलनिय है । इनका काव्य शाव्दिक मधुरिमा के चरमोत्कर्ष को जनाता ह्वै ।

विद्यापति तत्सम शव्द का प्रयोग तो किए है । साथ साथ तद्भव शव्द के प्रति उनका झुकाव स्पष्ट है । विद्यापति के पद लालित्य में यिन शव्दो का ही योगदान है । जयदेव के कोमल कान्त पदावली का अनुसरण करते हुए भी विद्यापति अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखते आए है । जयदेव जहाँ अलंकार के प्रति आकर्षित है तो वही कवि कोकिल अलंकार के प्रति तनिक भी उत्सुक नही । अलंकार तो उनके सहज रुप में प्राप्त होते जाते है । या मा कहिए कि विद्यापति की भाषा उस रमणी के समान है जो स्वाभाविक सौन्दर्य के गर्व में इतना उत्फुल्ल है कि उसे अलंकार की कोइ चिन्ता नही । अलंकार ग्रहण करे या न करे कोइ फर्क नही आने को विद्यापति की भाषा रमणी अलंकार मनोहर है तो जयदेव की भाषा रमणी प्रसाधन रमणीय ।

संगीत तत्व

विद्यापति का अधिकांश पद स्व गेयता रुप में संगीत तत्व से सम्पृकत है । जयदेव के गीत गोविन्द के समान रागताल लयाश्रित है । विद्यापति का समय समुन्नत संगीत परम्परा का परिणति ही कहा जा सकता है । चर्या पद सहित मैथिली साहित्य में जो पद मिला है वह सव संगीताश्रित है । विद्यापति का पद भी किसी न किसी राग वा रागिनी से

सम्वद्ध है । विद्यापति संगीत शास्त्र में पारंगत और संगीत प्रेमी भी थे । कवि कंठ से निसृत गीत संगीत तत्व के रुप में सिद्ध हो चूका है ।

लोक कवि

विद्यापति जनमानस में भीजे कवि थे । लोकात्मा से उनका आत्मीय सम्वन्ध था । कवि द्वारा रचित वहुत सा गीत संगीत तत्व का अनुगामी न होकर आत्मा के संगीतमयता से संवेदनशील है । यह संगीतमयता भाव के आत्मीयता और निश्छलता से अनुप्राणित है । अभिव्यक्ति की सहजता और अनुलंकृत भाषा प्रयोग से इनकी गीत रचनाएँ स्वत: जन जन के चित्त में स्थान वना लेती है । वे संगीताश्रित गीत को लेकर राज कवि है तो आत्मीक गीतोको लेकर लोक कवि । विरह वर्णनका अधिकांश गीत केवल इसी सहजता से विशेष सवेद्य है । हर गौर पदावली तो इनका लोक जीवन से इतना सम्पृकत है कि वह लोक साहित्य के रुप में प्रचलित है ।

भनिता

मुक्तक वा गेय कविताओ में भनिता प्रयोग एक प्रकार से कवि परिपाटी ही रही है । भनिता एक प्रकार से कवि हस्ताक्षार होता है । दुसरे अर्थ में इसे समर्पण वाक्य भी कहा जा सकता है । इसका अर्थ यह होता है कि कवि जिस व्यक्ति के निमित्त रचना करता है उस व्यक्ति का नाम इसमें अन्तर्निहित रहता है । विद्यापति का अधिकांश गीत भनितायुक्त है । अपनी भनिता में कवि अपनी उक्ति या कथन को वडे मार्मिक रुप से अभिव्यक्त किया है ।

पदावली के विषय विभाग,

विद्यापति पदावली में राधाकृष्ण के लीला विलास युक्त गीतों का प्रमुख स्थान प्राप्त है । इतना ही नही इसके क्षेत्र विस्तार में शिवलीला के पद समाहित है तो विभिन्न देव देवी के प्रति रचित स्तुति परक गीत भी उपस्थित है । यह सव विद्यापति के साहित्य साधना का चरम अभिव्यक्ति है । भाव और विचार, आकर्षण और विकर्षण, चाञ्चल्य और गाम्भीर्य, भोग और योग राग और विराग सहित जीवन के विभिन्न अवस्था के निरुपण जिस काव्यात्मक विधान के साथ मिलता है वह विलक्षण है । वय: सन्धि अवस्था से लेकर वृद्धवस्था तक के नर नारी इसमें अपने जीवन के विभिन्न पक्षका अनुरुप चित्र देखते है ।

इन गीतो का प्रभाव क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है । देवायतन से लेकर विलास भवन तक इन गीतो का गायन होता है । इस तरह भक्ति और श्रृंगार दोनो अव्याहत प्रवाहित होते है । इन समस्त पदावली का विषय गत विभाजन सामान्य तया इस प्रकार किया जा सकता है -

क) राधाकृष्ण के प्रेमलीला का गीतः- महाकवि जयदेव के आदर्श पर रचित इन गीतो में धर्म और श्रृंगार का मनोरम संयोग है । लोक जीवन के रसोपयोग से यह सव गीत इतना सहज और मानवीय हो गया है कि यह वैयक्तिक अनुभूति और अभिरुचि का प्रष्ट संवाहक प्रतीत होता है ।

ख) हर गौरी पदावलीः- इस में शिव लीला का अनेक रुप में चित्रण किया गया है । इसे लौकिक धरातल पर पारलौकिक चित्रण का विशिष्ट निदर्शन कहा जा सकता है ।

ग) स्तुति परक गीतः- इसमें विभिन्न देवी देवता शिव शक्ति गंगा कृष्ण राम आदि के प्रति भक्ति भाव अर्पित है । विद्यापति का यह शान्ति पद जिसमें सांसारिक निस्सारता का अनुभव है । इसे भगवच्चरण में आत्मसमर्पण भी कहा जा सकता है ।

घ) लोकाचार से युक्त व्यवहारिक गीतः- इस में मांगलिक अवसर पर गाइ जानेवाली सोहर मलार योग उचिती कोहवर कुमार वट गमनी तिरहुत समदाओन, उदासी नचारी महेश वाणी आदि अनेक प्रभेद है । इस क्रम में भिन्न भिन्न समय का अनुकूल गीत सव पायी जाती है । जैसे फागु चैत बारहमासा आदि । इसके अलावा और अन्य तरह के गीत है जो मिथिला सांस्कृति का अभिन्न अंग वन गया है ।

विकास एवं महत्व

अभिनव जयदेव के उपाधि से अलंकृत विद्यापति का गीत काव्य विहार वंगाल नेपाल तथा उत्तर प्रदेशादि के कवियो का प्रेरणा श्रोत के रुप में विकसित हुआ । विकास क्रम में आसाम और उडिसा सहित पूर्वाञ्चल के वैष्णव साहित्य के विकास में इसका महत्वपूर्ण योगदान है । वंगाल के वैष्णव सन्त र लोग इनके गीतो को मथुरा वृन्दावन तक प्रचार प्रसार किया । चैतन्य प्रभु तो इनके गीतो को गा गाकर झुम उठते थे । गौरांग महाप्रभु द्वारा समाहत होकर विद्यापति का पद गौडिय वैष्णव सम्प्रदाय में असाधारण रुप में लोकप्रिय हुआ और इन की गणना वैष्णव महाजनो की पंक्ति में होने लगी । विद्यापति का

गीत सौन्दर्य कवि के व्यक्तित्व का शव्द मय विग्रह है । मातृ भाषा के क्षेत्र में कवि कंठहार जागरण का कारणवन गये है । गीत काव्य के विकास में विद्यापति के गीत काव्य का वहुत वडा महत्व है । इसी गीत को आधार वनाकर मैथिली नाटक भी रचे गये है । विद्यापति के काव्य चेतना के विकास मे ओइनवार राजकुलका सक्रिय सहयोग रहा है । विद्यापति के अनुशरण और अनुकरण कर के काव्य रचना करने वाले कवियो की एक गोष्ठी थी जिसे विद्यापति गोष्ठी के नाम से जाना जाता है । इस गोष्ठी के सदस्य थे अमृत कर, हरपति चन्द्रकला गज सिंह भानु जीवननाथ भिखारी मिश्र कविराज आदि के अलावा नृप शिवसिंह नृप वैधनाथ भवेश और भरत आते है । महाराज केश नारायण भी विद्यापति के पथगामी हुए । स्वतन्त्र मुक्तक कार के रुपये महेश ठाकुर भागीरथ शंकर महिनाथ ठाकुर हरिदास, लोचन, गोविन्द दास आदि उल्लेखनीय है । नाटक के माध्यम से गीत लिखने वाले उमापति राम दास आदि उल्लेखनिय है । नाटक के माध्यम से गीत लिखने वाले उमापति राम दास, रमापति, शिवदत्त, लाल कवि, नन्दीपति, रत्नपाणि, भानुनाथ, हर्षनाथ है । जनमानस में विद्यापति के गीत का विकास इसी से आंका जा सकता है कि आज भी मिथिला के लोक जीवन और लोक मानस में वे इतने प्रतिष्ठित है कि किसी भी मांगलिक अनुष्ठान का शुभारम्भ इनके गोसाउनिक गीत से होता है । प्रत्येक शिवालय में इनके द्वारा रचित नचारी का गायन लोगों को मन्त्रमुग्ध कार देता है । किसी भी सामाजिक संस्कार के अवसर पर गायी जाने वाली गीत कविता विद्यापति के भनिता से युक्त रहता है । विद्यापति के गीत का प्रभाव मिथिला में ही सीमित न रहकर समस्त पूर्वाञ्चल में समाहत हुवा है । अनुराग से दीप्त इनका पद समूह वंगाल, आसाम और उडिसा के वैष्णव ऐतिहासिक उन्मेष में प्रेरणा का उत्स आनन्द प्रवाहित हुआ है । इसी प्रकार नेपाल के मैथिली और नेपाली साहित्य में भी इनके अनुशरण से नव स्फूर्तिका संचार हुआ ।

नेपाल के मल्ल शासकों जगज्ज्योति मल्ल, प्रताप मल्ल, सिद्धनरसिंह मल्ल, आदि के रचनाओ में विद्यापति का स्पष्ट छाप दिखाई पडता है । जगज्ज्योति मल्ल के आग्रह पर वंशमणि झा ने भी इस परम्परा को आगे बढाया । मोरंग में मुरारि मिश्र, चतुर्भुज, कुमार भीषम आदि कवियो ने इनके पद चिन्ह को आगे वढाया । वंगाल से विद्यापति को जो ख्याति मिली है उसका श्रेय मिथिला और वंगाल के सारस्वत साहचर्य को जाता है । मिथिला में अध्ययन करने आने वाले वंगाली छात्र वापस लौटने के क्रम में विद्यापति का पद कंठ गतकर धरोहर के रुपमें ले गाया करते थे । जिसमें इसका प्रचुर प्रचार प्रसार होता

रहा । राधाकृष्ण के लीला गान को लेकर वैष्णव कवियो के वीच विद्यापति लोक प्रिय होगये इसी में वंगाल के आदिकवि चण्डीदास के साथ इनका भी वंग साहित्य में प्रमुख स्थान मिला । विद्यापति के गीत साहित्य का प्रभाव चैतन्य महाप्रभु और उनके असंख्य शिष्यो पर पडा । वंगाल में वैष्णव धर्म काव्य प्रचार के लिए एक भाषा गोष्ठी वनी जिस का नाम था व्रजवुलि । व्रजबुलि के अनुयायी यो ने राधाकृष्ण को आधार वनाकर इस गीत परम्परा के आगे वढाया । विश्व कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर भी विद्यापति के गीत से अनुप्राणित होकर व्रजबुलि साहित्य भाषा में भानुसिंह पदावली नाम से पहला कविता संग्रह १८८६ ई. में प्रकाशित किया । आसाम में भी वैष्णव साहित्य का अभ्युदय विद्यापति के प्रभाव का परिणाम है । आसाम के प्रसिद्ध वैष्णव सन्त और समाज सुधारक शंकर देव अपने तीर्थ यात्रा क्रममें यह अनुभव किया कि वैष्णव धर्म के प्रचार और प्रसार में विद्यापति के गीतो का चमत्कारिक प्रभाव है । आसाम के वैष्णव साहित्य में असमिया व्रजवुलि का विशेष स्थान है । इसके वरगीत और अंकीया नाट दो प्रकार का भेद है । उडिसा के वैष्णव साहित्य पर भी विद्यापति के गीतो का अमिट प्रभाव रहा है । उडिसा वैष्णव साहित्य पर भी व्रजबुलि साहित्यका प्रभाव देखा जाता है । यह कपिलेन्द्र देव रचित परशुराम विजय नाम के नाटक में प्रत्यक्ष देखा जा सकता है । उडिसा के राज दरवार में मैथिली विद्वानो का समादर होना इस का प्रमाण है । उडिसा के वैष्णव सम्प्रदाय में रामानन्द का उल्लेखनीय स्थान हा है । राम रामानन्द विद्यापति के गीतो से प्रभावित थे । उन्हो ने इस परम्परा को आगे बढाते रहे । चैतन्य महाप्रभु उडिसा के जगन्नाथ मन्दिर में १२ वर्ष तक रहे । उनके शिष्य गणो की संख्या बारह हजार कहा जाता है । ये शिष्य गण अवश्य ही विद्यापति के गीतो का अनुशरण कर गीत काव्य परम्परा को आगे वढाने में सहयोग किए होंगे इस में तनिक भी सन्देह नही करना चाहिए ।

इस प्रकार विद्यापति के गीत परम्परा का प्रभाव हिन्दी साहित्य के भक्त कालीन कवियो पर भी पडा । भक्त कवियो में कवीर, सूर , तुलसी, अष्टछाप के कवि सहित नरोत्तम दास, जायसी, मीरावाई और विहारी आदि के कवि कृति में स्पष्ट देखा जा सकता है ।

परिच्छेद ३

जनकवि विद्यापति की जीवनी व्यक्तित्व एवं कृतित्व

३.१ कवि का प्रारम्भिक जीवन

प्राचीन कवियों की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के समय भी निश्चित नहीं है फिर भी किंवदन्ती तथा स्फुट पदों के आधार पर इनके विषय में जो कुछ जानकारी है वह इस प्रकार है -

विद्यापति मैथिल ब्रह्ममण थे । इनका मूल "विसडवार" और आस्पद ठाकुर था । इनके पिता गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभा पण्डित थे । इनके माता हाँसिनी देवी थी । विशेष तथ्यो द्वारा जुटाए गये प्रमाण के अनुसार इनका जन्म २४१ लक्ष्मणाव्द में या सम्वत् १४०७ विक्रमीय (सन् १३५० ई) में हुआ होगा । कपिलेश्वर महादेव की आराधना के वदौलत इनके पिता ने इनके जैसा पुत्र रत्न प्राप्त किया था । विहार प्रान्त के मधुबनी जिल्लान्तर्गत विसपी ग्राम में जन्म लेकर कवि कोकिल ने मैथिली और हिन्दी साहित्य कोष को अक्षय रुप में भरा है । इन का वाल्यकाल आनन्द पूर्वक विता । विद्यापति ने सुप्रसिद्ध विद्वान हरि मिश्र से विद्याध्ययन किया था । मिथिला के सुविख्यात विद्वान पक्षधर मिश्रा इनके सहपाठी थे । विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरवार में वचपन से ही आया जाया करते थे । प्रारम्भ से ही इनमें प्रतिभा की झलक दीख पडती थी । अल्प वयस से ही वे कविता करने लग गए थे । कीर्तिलता के प्रथम पल्लव में कवि ने स्वयं कहा है-

देसिल वयना सव जन मिट्ठा ।
तें तैसन जम्पओ अवहठ्ठा ॥

देशी भाषा सव को मीठी लगती है, यही जानकर मैने अवहट्ठ भाषा में इसकी रचना की है । कवि व्यक्ति एवं कृतित्व-संस्कृत अपभ्रंश तथा मैथिली हिन्दी में इन्होने अनेक रचनाएँ की है परन्तु इनकी ख्याती विद्यापति पदावली के द्वारा बढी

बालचन्द विज्जावइ भाषा । दुहु नहि लग्गइ दुज्जन हासा ॥
ओ परमेश्वर हर सिर सोहइ । इ निच्चय नाअर मन मोहई ॥

"बाल चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा इन दोनो पर दुष्टों की हँसी नही लग सकती । वह बाल चन्द्रमा देवता के रुप में शिव के सिर पर सोहता है और यह विद्यापति की भाषा निश्चय पूर्वक नागरों का सुचतुर भाषा पंडितो का मन मोहती हैं ।"

इस पद के एक एक शव्द से कवि का अभिमान टपकता है । जयदेव के समान इन्हे भी अपनी भाषा पर नाज था । यह वात अक्षरशः सत्य है की भाषा की मीठास और कोमलता की दृष्टि से तो इनका कोइ भी प्रतिद्वन्दी हिन्दी और मैथिली साहित्य में नही है । राजा शिव सिंह के राज्य काल में इनकी घनिष्ठता शिव सिंह से हूई । तव से विद्यापति शिवसिंह के अन्तिम समय तक उन्ही के पास रहे । विद्यापति चमत्कारी पुरुष थे । इनके भक्ति से प्रभावित हो स्वयं शिव उगना के रुपमें इनके यहाँ टहलु के रुप में रहे थे । ये अपने समय में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों को दुर करने के लिए जीवन भर प्रयास करते रहे ।

३.२ संस्कृत रचना

संस्कृत भाषा पर भी विद्यापति का पुरा-पुरा अधिकार था । इनके द्वारा लिखित संस्कृत रचनाओं से यह प्रमाणित होता हैं । इनके द्वारा लिखित संस्कृत रचनाएँ हैं- कीर्तिलता, कीर्तिपताका भू परिक्रमा, पुरुष परीक्षा, लिखनावली, शैव सर्वस्वसार, गंगा वाक्यावली, दान वाक्यावली, दुर्गा भक्ति तरंगिणी के साथ कीर्तिपताका अबहत भाषा में है । जो मैथिली भाषा में लिखी गई प्रेम सम्बन्धी कविताएँ है । भू परिक्रिमा में नैतिक शिक्षा से भरी कहानियाँ है । यह राजा शिव सिंह की आज्ञा से लिखी गई थी । पुरुष परीक्षा राजा शिवसिंह के आग्रह पर लिखी गई थी । इसमें ललित कथाओं के रुप में पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित हैं । यह राजा वनौली के अधिपति पुरादित्य के लिए २९९ लक्ष्मणाव्द में लिखी गई है । शैव सर्वस्वसार रानी विश्वास देवी के समय में लिखी गई थी । गंगा वाक्यावली भी रानी विश्वास देवी के लिए ही लिखी गई थी । दुर्गा भक्ति तरंगिणी दुर्गा पूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है । इसके अतिरिक्त विभाग सार (स्मृतिग्रन्थ), वर्षकृत्य और गया पत्तलक नामक संस्कृत पुस्तक भी इन्ही की है ।

हिन्दी और मैथिली के लिए यह नितान्त गौरव की वात है कि उसका एक प्रथम श्रेणी का कवि संस्कृत साहित्य में भी अपना खास स्थान रहता है ।

३.३ उपाधियाँ

हिन्दी कवियों में उपनाम रखने की एक परिपाटी देखी जाती है । हाँ फरक इतना जरुर है कि प्राचीन हिन्दी कवियो के उपनाम राज प्रदत्त वा अन्य कोई प्रसिद्ध व्यक्ति कवि की काव्य कुशलता देख कर उसीके अनुसार उपाधी प्रदान करता था । वही उपाधी कवि का उपनाम होता था । आज काल के प्रत्येक कवि अपना एक एक उपनाम रखता है ।

विद्यापति तो कई उपाधियो से विभूषित थे । अभिनव जयदेव की उपाधि तो सर्व प्रसिद्ध है । यह उपाधि विसपी ताम्रपत्र के अनुसार राजा शिवसिंह द्वारा दी गई थी । संस्कृत साहित्य के जिस प्रकार मधुर श्रृंगार वर्णन में जयदेव को जोड नही है, उसी प्रकार हिन्दी तथा मैथिली साहित्य में विद्यापति का जोड नही हैं । अभिनव जयदेव नाम से एक पद देखें - सुकवि नव जयदेव भनियो रे ।

देव सिंह नरेन्द्र नन्दन । सेतु नरवइ कुल निकन्दन ।
सिंह सम शिव सिंह राजा । सकल गुनक निधान गनियो रे ॥

कवि शेखर इनकी दुसरी उपाधि है । इस उपाधि से भी इनकी अनेक रचनाएँ है । कवि कंठहार और कवि रंजन इन दो नामों से भी इनकी अधिक रचनाएँ देखी जाती है । दशावधान और पंचानन उपाधि इनकी है । दशावधान उपाधि दिल्लीश्वर ने दी थी । इनकी कुछ कविताएँ चम्पति या विद्यापति चम्पई नाम से भी इनकी कुछ कविताएँ देखी गई है ।

इस प्रकार उपनाम के धनी विद्यापति इसके लायक भी थे ।

३.४ धर्म सम्प्रदाय

जिस तरह विद्यापति के जन्म भूमि के लिए खिंचातानी होती रही है उसी तरह उनके धर्म सम्प्रदाय के सम्वन्ध में भी मतभिन्नता चल रही है । राधाकृष्ण विषयक कविताओं के आधार पर इन्हे वैष्णव, शिव गीत या नचारी के आधार पर शैव तथा देवी दुर्गा भक्ति के आधार पर शाक्त होने को दावा लोगों में है परन्तु सूक्ष्म विवेचन से देखा जाय तो वे वहु ईश्वर वादी होते हुए भी शिव भक्त थे । शिव समन्वय के देवता माने गये है । ये श्रृंगारिक कवि थे या भक्त कवि इस पर भी विवाद है । श्रृंगारिक वर्णन में राधाकृष्ण के रास विलास का ही सहारा लिया जाता रहा है । क्यों कि श्रृंगार के आराध्य देव श्री कृष्ण

जी ठहरे । यही कारण है कि सभी भारतीय श्रृगारिक कवियों ने इसी युगल मूर्तिको लक्ष्यकर श्रृंगारिक रचनाएँ की है ।

किंतु इसी से किसी कवि को वैष्णव मान लेना ठीक नही है । वंश परम्परा के आधार पर इनके पिता शैव थे । इनके जन्म स्थान विपसी से उत्तर भेडवा नामक एक ग्राम है जहाँ अभी भी वाणेश्वर महादेव मन्दिर है । इनके पिता ने इसी महादेव की उपासना कर यह पुत्ररत्न प्राप्त किया था । ऐसी अवस्थामें इनका शैव होना वहुत सम्भव है । वंश परम्परा का पालन करते हुए वे वहु ईश्वर वाद में विश्वास रखते हुए भी शैव थे । इनके गीतों नचारियो से भी यह तथ्य सामने आता है । ऐसे में इनका एक पद यो है-

आन चान गन हरि कमलासन, सव परिहरि हम देवा ।

भक्त बछल प्रभु वान महेश्वर, जानि कएलि तुअ सेवा ॥

हे वाण महेश्वर अन्य देवता को छोड मैने भक्त वत्सल जानकर तुम्हारी ही सेवा की इससे यह सावित होता है कि ये इसी महादेव की उपासना करते थे । इनके वनाए हुए अनेकानेक शीव गीत तथा नचारियां मिथिला में धूम मचाए हुए है ।

मिथिला में इनकी पदावली तो विशेषत: स्त्रियों में प्रचलित है तो पुरुषो में नचारियाँ । तीर्थस्थानो को जाती हुई झुंड की झुंड कोकिल कंठी रमणियाँ जिस प्रकार इनके मधुरपद गाती झुमती जाती है , उसी प्रकार तीर्थ यात्री पुरुष के झुंड वडे प्रेम से नचारियाँ गाते गाते भाव विह्वल हो जाते है । कहते है स्वयं महादेव इनकी भक्ति पर मुग्ध होकर उगनारुप में इनकी सेवा में उपस्थित हो गये थे । भेद खुल जाने पर वे अन्तर्धान हो गये । विद्यापति पागल होकर गाने लगे:-

उगना रे मोर कतए गेलाह । कतए गेला सिव कीदहु भेलाह ॥
भांग नहिं बटुआ रुसि वैसलाह । जोहि हेरि आनि देल हंसि उठलाह ॥
जे मोर कहता उगना उदेस । ताहि देवओं कर कँगना वेस ॥
नन्दन बन में भेटल महेस । गौरि मन हरखित मेटल कलेस ॥
विद्यापति भन उगना सों काज । नहि हित कर मोर त्रिभुवन राज ॥

इस तरह के इनके कई पद है । यह वात निस्संदेह सत्य है कि वे आज कल के शैवों भी तरह विष्णु द्रोही नही थें । ये शिव और विष्णु को एक ही रुप की दो कलाएँ मानते थे । इनका यह पद्य देखिए-

भल हरि भल हर भल तुअ कला । खन पिन बसन खनहि बघछला इत्यादि ।

इसी तरह शैव और वैष्णव मतावलम्वी के वीच आपसी कलह को देख, गोस्वामी तुलसी दास जी ने भी कहा था । देखिए:-

शिव द्रोही मम दास कहावा । सो नर मोहि सपन हुँ नहि भावा ॥ अध्यात्म रहस्य को जानने वाले इस तरह के दकिया नुकी में विश्वास नही करते । वे तो समन्वय में ही अपना और समाजका कल्याण समझतें है । विद्यापति समन्वयवादी कवि थे । अपने समय के मार काट वाद विवाद धर्म सम्प्रदाय के झगडों से उब चुके थें । अतः उन्होने प्रचलित देवी देवताओं को स्वीकार कर दुर्गा, गंगा, राम सीता, के रुपो को स्वीकार करके इनकी स्तुति वन्दना की है । इससे उन्हे कोई शाक्त कहे, शैव कहे, वैश्णव कहे यह उनकी अपनी सोच होगी । विद्यापति तो मिथिला के मैथिलों के समान एक साथ भस्म त्रिपुण्ड, श्रीखण्ड, चन्दन और सिंदुर विदु के अनुयायी थे । उपर्युक्त तीनों देवताओं की ये तीनों निशानीयाँ है । वे तीनों को समान आदर की दृष्टि से देखते है, किसी एक सम्प्रदाय के नही है । इसी प्रकार कवि के रुप में विद्यापति का व्यक्तित्व सहज और स्वभाविक प्रतीत होता है । एक एक शव्द काव्य के माध्यम से भावों को अभिव्यक्त करता है ।

३.५ आश्रयदाता शिव सिंह

विद्यापति के आश्रय दाताओं में राजा शिवसिंह का नाम प्रथम श्रेणी में आता है । वे उन्ही की छत्रच्छाया में रहकर अपने अधिकांश पदो की रचना की थी । शिव सिंह तो इन्हें प्रचुर सम्पत्ति देकर इन्हें सांसारिक झंझटो से मुक्त कर दिया था, तो कवि ने भी वदले में उनका और अनकी धर्म पत्नी लखिमा देवी का नाम अपने पदों में देकर उन्हें अजर अमर बनादिया है । शिव सिंह का भौतिक दान तो थोडे ही दिनों में विलीन हो गया, किन्तु इन्होंने जो उन्हें यशका दान दिया वह अनन्त काल तक संसार में विद्यमान रहेगा । ये शिवसिंह थे कौन ? ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और जनश्रृति के अनुसार मिथिला के नवीन युग के शासकों में सिमरांव और सुगाँव के राजघराने अधिक प्रसिद्ध है । राजा शिव सिंह सुगाँव

राज घराने में हुए थे । सुगाँव राज घराने से पहले सिमराँव राज घराने के लोग शासन करते थे । उनकी राजधानी सिमराँव गढ में थी जो चम्पारण जिले में है । सिमराँव के राजा क्षत्रिय थे । इस राज्य का संस्थापक नान्यदेव था । इसी कुल में सुप्रसिद्ध हरिसिंह देव हुए थे, जिन्होनें नेपाल विजय की थी । हरिसिंह देव के मंत्री विद्यापति के पूर्वज चण्डेश्वर थे और उनके राज पण्डित कामेश्वर ठाकुर ।

हरिसिंहदेव ने एक वार वृहद् यज्ञानुष्ठान किया था, जो अन्य राज्यओं द्वारा यज्ञ विफल कर दिया गया, जिससे विरक्त होकर वे जंगल चले गये । इनके न रहने पर मिथिला में अराजकता फैल गई । इसी का सुअवसर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढाई कर दी, फलस्वरुप मिथिला का शासन सूत्र मुसलमानों के हाथ आ गया । इस अवसर पर राज पण्डित कामेश्वर ठाकुर ने वादशाह से भेट की । बादशाह उनके गुण से अत्यन्त सन्तुष्ट हुए और उनके द्वारा अस्वीकृत किए जाने पर भी उन्ही को मिथिला प्रदेश का शासक नियुक्त किया । तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ आया । कामेश्वर ठाकुर ओयनवार ब्राह्मण थे । ओयनी गाँव में वसने के कारण इस वंशको ओयन वार वंश कहते है । ओयनवार वंश के सव से प्रथम राजा यही कामेश्वर ठाकुर हुए । उनके वाद उनके पुत्र भोगेश्वर और भोगेश्वर के वाद उनके पुत्र गणेश्वर राजा हुए । गणेश्वर के दो वेटे थे बीरसिंह देव और कीर्तिसिंह । इन्ही कीर्तिसिह के दरवार में विद्यापति कीर्तिलताका निर्माण किया । कीर्तिसिंह और बीरसिंह निःसन्तान होने के कारण मृत्यु को प्राप्त हुए तव भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए । राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे । उनकी राजधानी गजरथपुर नामक नगर में बागमती नदी के किनारे थी ।

शिवसिंह के प्रति विद्यापति का प्रेम अटूट था । विद्यापति के अधिकांश पदों में उनके नाम के साथ साथ उनकी प्राणप्रिया महारानी लखिमा देवी का भी नाम है । इनके पदों में लखिमा देवी के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों के नाम भी आए है ।

राजा शिवसिंह जिस तरह कलाविद् थे उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे । स्वाभिमानी होने के नाते दिल्ली कर भेजना वन्दकर दिये जिसपर मुसलमानी फौज मिथिला आई और दैव दुर्पाक से शिव सिंह कैद कर के दिल्ली ले आए गये । इधर विद्यापति को शिवसिंह के विना चैन कहाँ ? इधर लखिमादेवी की दशा भी विगडने लगी । मित्रो की पहचान संकट काल में होती है इस वात को मन में रख, अपनी जान पर खेल विद्यापति दिल्ली पहुँचे ।

वहाँ जाकर अपना परिचय दिया । सुलतान ने कहा अगर शायर हो तो कुछ करामात दिखाओ । शर्तअनुसार सुलतान ने एक सद्यः स्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा । वे गाने लगे कामिनि करए सनाने । हेरितहिं हृदय हनए पंच बाने ॥ आदि ।

सुलतान को इससे भी सन्तुष्टि न हुई । विद्यापति एक काठ के सन्दुक में बन्द किए गए और वह संदुक कुएँ में लटका दिया गया । उपर एक सुन्दरी स्त्री आग फूँकती हुई खडी कि गई । तव उनसे कहा गया कि उपर जो कुछ है उसका वर्णन करो ।

वे संदुक के अन्दर से गाने लगे-

सजनि निहुरि फुफू आगि ।
तोहर कमल भमर मोर देखल मदन उठल जागि ॥
जौं तोंहे भामिनि भवन जएवह ऐवह कोनह बेला ।
जौं एहि संकट सँ जिव वाँचत होयत लोचन मेला ॥

इस पर सुलतान अत्यन्त प्रसन्न हुआ और राजा शिव सिंह छोड दिये गये । राजा शिवसिंह दानी राजा थे । इनकी दानशीलता की कहानियाँ अभी तक मिथिला में प्रचलित है । पतौल नामक गाँव में उनका खुद वाया हुआ एक तलाव है, जिसके विषय में यह कहावत प्रसिद्ध है कि-

पोखरि रजौखरी और सब पोखरा । राजा शिवसिंह और सव छोकरा ॥ ल.स. २९३ में इनकी पिता की मृत्यु हो गई । ठीक उसी समय दिल्लीश्वर ने भी मिथिला पर चढाई कर दी । दिल्लीश्वर के साथ वंगाल के नवाव भी थे । शिवसिंह के लिए बडे संकट का समय था । एक तरफ पिता का श्राद्धादि कर्म, इसरी ओर युद्ध का आयोजन ।

पहलीवार युद्ध तो जीत गए परन्तु राज्यारोहण के तीन वर्ष वाद ही पुनः यवन सेना मिथिला पर आचढी । शिवसिंह यवन सेना की तैयारी को देखते हुए अपना भविश्य समझ गये और अधिनता स्वीकार करना उन्हें पसन्द न हुआ । उन्होने अपनी स्त्रियो को विद्यापति के साथ अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास 'राजा वनौली' (नेपाल-तराई) भेज दिया, विद्यापति नें यही रहकर लिखनावली ग्रन्थ लिखें ।

शिवसिंह सेना के साथ बादशाह से जा भिडे । वे शाही सेना का व्युह भेदकर बादशाह के निकट पहुँच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उडातें हुए फिर बाहर निकल गये । उनकी वीरता पर बादशाह मुग्ध हो गया । यवन सेना उनके पीछे दौडी तो बादशाह ने मनाकर दिया । शिवसिंह वहाँ से नेपाल की ओर जंगल में चले गये और पुन: अपने राज्य में न लौटे ।

३.६ मृत्युकाल

प्रमाणिक मतानुसार विद्यापति की मृत्यु ९० वर्ष की अवस्था में संवत १४९७ विक्रम में (या १४४० ई.मे) हुई थी । जन्मभर श्रृंगार रचना में व्यस्त रहने के कारण अन्तिम समय में संसार से इन्हे विरक्ति हो गई थी । इन्हें अपना भविष्य अंधकारमय प्रतीत होता था - निराशा की काली घटा ने इनके हृदय व्योम को झकझोर दिया था । ये अत्यन्त करुण स्वर में गाते है-

तातल सैकत बारि-विन्दु-सम, सुत-मित-रमनि समाज ।
तोहि विसारि मन ताहि समरपल आव हो एव कोन काज ॥
माधव, हम परिनाम निरासा ।
तोहें जगतारन दीन दया मय अतए तोहर विसवासा ॥
आध जनम हम नींद गमाओल जरा सिसु कत दिन गेल ।
निधुवन रमनि-रभस रंग मातल तोहि भजव कोन बेला ॥

इन्होने अपनी कविता-रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी । वृद्धावस्था में इस अपार धन को देखकर कहते है-

जतने जतेक धन पापें वटोरल मिलि-मिलि परिजन खाए ।
मरनक वेरि हरि केओ नहि पूछए करम सँग चलि जाए ॥
ए हरि, बन्दओं तुअ पद नाए ।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि पारक कओन उपाय ॥
जनम अवधि नहि तुअ पद सेविल जुवती रति-रंग मेलि ।
अमिय तेजि किए हलाहल पीउल सम्पद अपदहि मेलि ॥

वे अपनी उमर की ओर लक्ष्यकर कहते है-

वयस, कतह चल गेला ।

तोंहे सेवइत जनम बहल, तइयो न आपन भेला ॥

अन्तिम समय में वे अपनी मृत्यु निकट जान अपने घर के लोगों से विदा लेकर गंगा सेवन को चले । गंगा सेवा में जाते वक्त उनने अपने पुत्र से वहुत कुछ उपदेश किया । फिर वे अपनी कुल देवी विश्वेश्वरी के समीप जाकर अनुनय विनय करते हुए कहा- "माँ, अव गंगा जारहा हुँ । जन्मभर शिव की आराधना की । अव विदा दो ।"

मलने जुलने वाले सभी को सन्तुष्ट कर पालकी पर चढ गंगा की ओर चले । गंगा से कुछ दुर इधर ही पालकी रखवा दी और एक स्वाभिमानी भक्त की तरह गंगा से कहा- "मै इतनी दुर से मैया के निकट आया, कया मैया मेरे लिए दो कोस आगे नहीं वढ आवेगी ?" रात बीती । दुसरे ही दिन गंगा अपनी मूल धारा घोड, दो कोस की हुइ पर पहूँच गई थी ॥ लोग यह आश्चर्यजनक दृश्य देखकर अवाक् रह गये । आज उस स्थान का नाम "मऊ वाजितपुर" है । जहाँ अभी भी गंगा की धारा टेढी नजर आती है । यह स्थान विहार के समस्तीपुर जिले में पडता है । यहीं इनकी मृत्यु हुई थी । इनकी चिता पर एक शिव मन्दिर है । जो आजतक विराजमान है । इनकी मृत्यु तिथि के विषय में एक पद प्रचलित है-

विद्यापतिक आयु अवसान । कार्तिक धवल त्र्योदसि जान इसके अनुसार इनकी मृत्यु कार्तिक शुक्लपक्ष । त्रयोदशी तिथि को गंगा नदी के तट पर गंगा सेवन करते समय हुई । मृत्यु सत्य है । वह सव को वरण करती आरही है । परन्तु कीर्तिर्यस्यस जीवति के अनुसार विद्यापति आज तक जीवित हैं और रहेंगे भी । जब तक उनके गीत और नचारियाँ मिथिलाञ्चल में गुञ्जते रहेगें वे अमर रहेगें ।

३.७ हस्ताक्षर

विद्यापति, प्राचीन हिन्दी कवि चन्दवरदाई को छोडकर सभी प्रसिद्ध हिन्दी कवियों से पहले हुए थे । इनकी स्वय लिखी हुई निजी रचना पदावली या संस्कृत पोथियाँ नही पाई जाती । इतना जरुर है कि इनके हाथ की लिखी हुई सटीक भागवत की पोथी मिली है जो दरभंगा से बारहकोस दुर पूर्व में तरोनी नामक गाँव मे सुरक्षित है । लिखावट सुन्दर, कहीं

भी एक अशुद्धि अथवा लिपिदोष नहीं है । रोशनाई सर्वत्र स्वच्छ है । ग्र न्थ के शेष में लिखा है -

"शुभमस्तु सव्वार्थगता संख्या ल.स. ३०९ श्रावण शुक्ल १५ कुजे राजा वनौली ग्रामें श्री विद्यापतिर्लिपिरियमिति ।

३.८ परिवार

इनके एक पद के अनुसार इनके वेटे का नाम "हरिपति था । इनके एक कन्या भी थी । नाम दुलही था । वैसे तो मिथिला में नव वधू को लोग दुलही भी कहते हैं । परन्तु इनके अन्तिम काल के एक पद से इनकी लडकी दुलही थी स्पष्ट हो जाता है -

दुल्लहि तोहर कतए छथि माय । कहुन ओ आवथुएखन नहाय, दुलही तुम्हारी माँ कहाँ है ? कहो न, वे इस समय स्नान कर आवें । लोचन नामक कवि के राग तरंगिणी नामक पुस्तक में विद्यापति के बहुत से पद रखे गए है । जिसमें एक कविता चन्द्रकला नामक एक रमणी की वनाई हुई पाई जाती है । इस कविता पर लोचन ने टिप्पणी की है- इति श्री विद्यापति पुत्रवध्वा: इससे मालुम होता है कि चन्द्रकला विद्यापति की पतोहू थी । यहाँ चन्द्रकला द्वारा लिखित पद्यांश देखे:-

स्निग्ध कुञ्चित कोमलं कच गंडमंडित कोमलम् ।
अधर विम्व समान सुन्दर शरद चन्द्रमिवाननम् ॥
जय कम्वु कंठ विशाल लोचन सारमुञ्वल सौरभम् ।
वाहुवल्लि मृणाल पंकज हार शोभित ते शुभम् ॥

अन्तिम पद है-

चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तेज तोहें राधिके ।
वचन ममधर कृष्ण मनुसर किन्तु काम कलाशुभे ॥
चन्द्रकला हे वचन करसी । मानिनि माधव मनु सरसी ॥

इस प्रकार देखा जाए तो विद्यापति के परिवार पर सरस्वती की पूर्ण कृपा थी ।

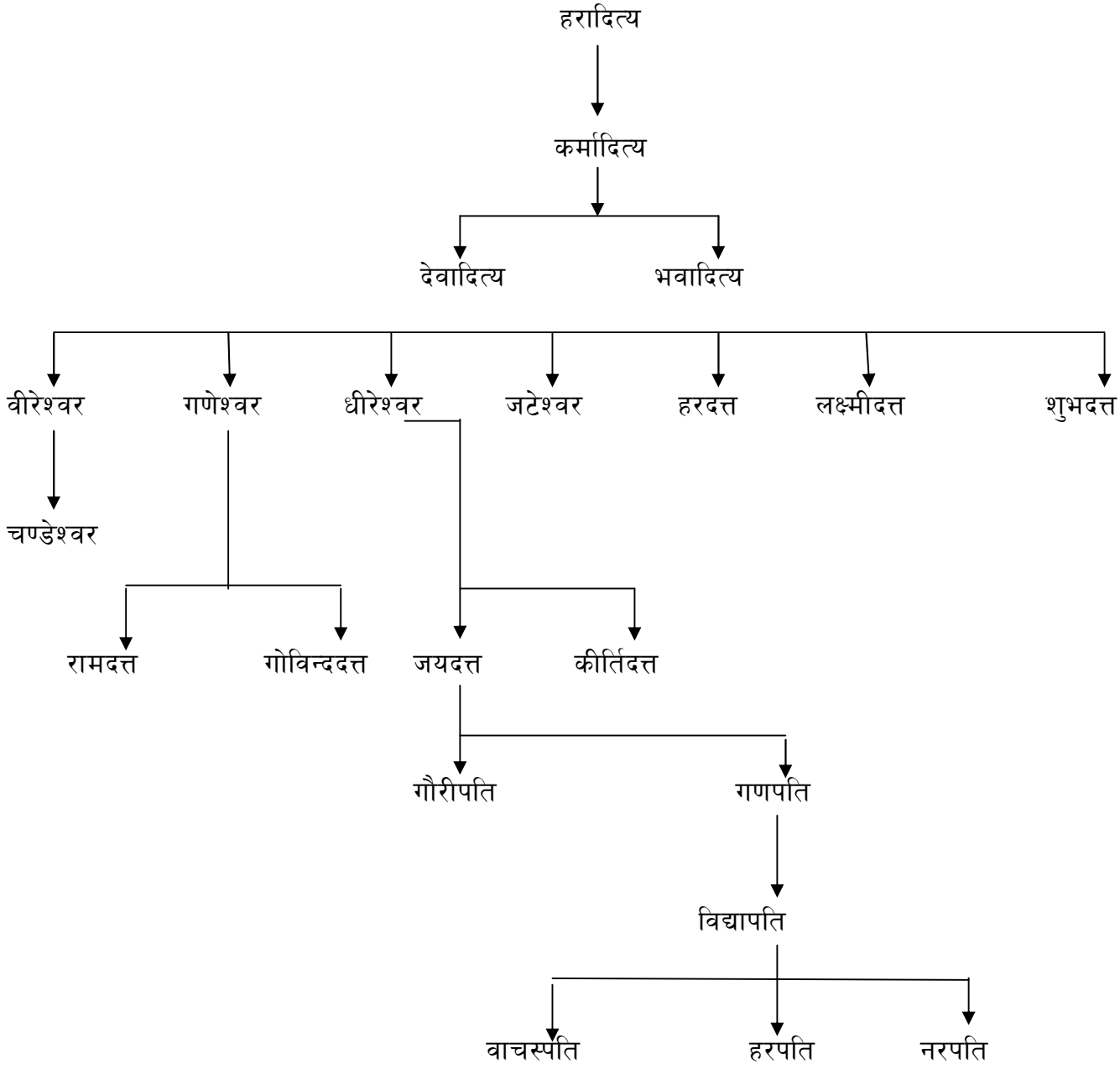

३.९ इनके सहपाठी पक्षधर मिश्राजी

पक्षधर मिश्र मिथिला के प्रकाण्ड विद्वान हो चुके है । वे विद्यापति के सहपाठी थे । विद्यापति ने अपने गाँव विपसी में एक धर्मशाला (अतिथिशाल) बनवा रखी थी । प्रायः भोजनोपरान्त वे स्वयं अतिथिशाला में जाते और अतिथियो से वार्तालाप करते । सुना जाता है की एक दिन ये अतिथिशाला में गए । उनको देखते ही अतिथि गण उनके स्वागत में उठ खडे हुए । केवल कोने में एक कृश पुरुष वैठा ही रहा । पूछताछ के क्रममें मालूम हुआ की उसने भोजन नहीं किया है । उस पुरुष की दुर्बलता पर इनके मुँहसे सहसा निकल गयाः-

"प्राघुणो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षितः" । घर के कोने में घुनवत् अतिथि सुक्ष्मतावशतः नही दिख पडें । यह सुनते ही बैठे हुए पुरुष ने तुरन्त उस श्लोक की पूर्ति करते हुए उत्तर दिया-

"नहि स्थूलधियः पुंसः सूक्ष्मो दृष्टि प्रजायते ॥" स्थूल बुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नही दिखपडता । वोली सुनते ही ये अपने सहपाठी को पहचान गए और उन्हे आदरपूर्वक अपने घर ले आए ।

३.१० विद्वेषी केशव मिश्रजी

बडे लोगो के प्रति अडोस पडोसवाले सदा द्वेष भाव रखते है, यहवात स्वयं सिद्ध है । इनके भी कुछ लोग विद्वेषी थे । कारण था विद्यापति मेधावी तथा सहृदयी कवि थे । अपने पद और नचारी लिखकर स्वयं गाते भी थे । इसमें तन्मय होकर नाचने भी लगते थे । वश क्या था इनके विद्वेषी को इनके चिढाने का एक अस्त्र मिल जाता था और वे इन्हे नर्त्तक कहकर चिढाते थे । इसी में इनके एक प्रसिद्ध विद्वेषी हो गए थे, उनका नाम था केशव मिश्र । मिश्र जी शाक्त थे । द्वैत परिशिष्ट नामक अपने पुस्तक में उन्होने देवी भागवत को प्रमाणिक ग्रन्थ प्रतिपादित किया ह्वै ।

विद्यापति ने अपने हाथ से श्रीमद्भागवत लिखा था, इसलिए मिश्र जी इनसे चिढ से गए थे । द्वेष की भी कोइ सीमा होती है । विद्यापति राजा शिवसिंह से विपसी गाँव उपहार स्वरुप प्राप्त किए थे । इस पर भी मिश्र जी इन्हे अतिलुब्ध नगर याचक नाम से उपहास करते थे । अहंकारी और उद्दण्ड लोग ही अच्छे लोगों तथा उनकी कृतियों को उपहास की दृष्टि से देखते है । आलोचना से और कर्तव्यनिष्ठा वढ आती है । जो विद्यापति में आयी थी । इसी लिए एक विद्वान ने कहा है -

निन्दक नियरे राखिए, आंगन कुटी छवाए ।
विन सावून पानी विना निर्मल करे सुभाय ॥

चरित्र निर्माण में निन्दकोंकी भी एक भूमिका होती है ।

परिच्छेद ४

विद्यापति की पदावली की विशेषता एवं विश्लेषण

सामान्य परिचयः- विद्यापति संस्कृत के विद्वान थें, दर्जनभर संस्कृत ग्रन्थ लिखे भी है । परन्तु इनकी प्रसिद्धि का खास कारण है इनकी **पदावली** । गाने योग्य छंद पद कहे जाते हैं । इन्होने जितने छंद बनाए, सभी संगीत के सुर-लय से बँधे हुए है । इन्होने अपनी कविता में जयदेव को आदर्श माना है । इसी लिए लोग अभिनव जयदेव भी कहते थे । जयदेव के ही समान ये संगीत पूर्ण कोमल कान्त पदावली में श्रृंगारिक रचना करते थे । इनकी कविता में लय सुर ठीक करने के लिए राजा शिवसिंह ने अपने दरबार में रहने वाले सुमति नामक एक कलाविद् कायस्थ कत्थक के लडके जयत को इनके समीप रख दिया था । विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका सुर ठीक करता थाः-

सुमति सुतोदय जन्मा जयतः शिवसिंह देवेन ।
पण्डितवर कवि शेखर- विद्यापतये तु सन्न्यस्तः ॥१

संगीत का मर्म जाने विना संगीतमय पदों की रचना असम्भव है । मालूम होता है कि कवि स्वयं भी गान विद्या मे पारंगत थे । इनके पदों में कहीं-कहीं छन्दो भंग सा दिखता है, लगता है संगीत के सुर लय के अनुसार जो पद बनाए जाते है, उनमें ध्वनि का ही विचार किया जाता है- अक्षर और मात्रा का नहीं । संगीत से अपरिचित व्यक्ति इस तरह के दोषारोपण करते ही रहते है ।

पदावली का रुपः

कवि कोकिल द्वारा रचित सभी पदों का विवरण अभी तक पुरा प्रकाशित नही हो पाया है । श्री नगेन्द्र नाथ गुप्त ने ९४५ पदों का संग्रह कर प्रकाशित किया था तो बाबू व्रजनन्दन सहाय जी का संग्रह इनसे वहुत छोटा है, फिर भी उसमें कुछ ऐसे पद है, जो नगेन्द्र नाथ गुप्तवाले संस्करण में नही है । सहाय जी के नए पदों में नचारियों की ही प्रधानता है ।

मिथिला की स्त्रियाँ इनके जिनपदों को व्रतवन्ध और विवाहादि मांगलिक अवसर पर गाती हैं ऐसे उनके अनेक अनूठे पद अभी अप्रकाशित ही हैं । जिसे प्रकाश में लाना अनिवार्य है ।

पदावली के प्राचीन संस्कारणों को देखने से पता चलता है कि इन्होने पदों की रचना विषय विभाग के अनुसार नही की थी । विहारी के ही समान ये भी, जब उमंग में आते थे, तब रचना कर डालते थे । पीछे लोगों ने उनका अलग-अलग विभाग कर सजा लिया ।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ:

विद्यापति के अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही है और उन्ही का संग्रह पदकल्पतरु आदि वंगला के प्राचीन संग्रह ग्रन्थों में है । किंतु हाल में तीन प्राचीन हस्त लिखित ग्रन्थ मिले है जिनसे इनके अनेक नवीन पद प्राप्त हुए है और पदावली का पूरा पता चला है ।

उन ग्रन्थों में सव से प्राचीन और प्रमाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है । यह भी विद्यापति लिखित भागवत के साथ तरौनी ग्राम के स्वर्गीय पण्डित जयनारायण झा के घर में सुरक्षित पाई गई है । कहा जाता है विद्यापति के प्रपौत्र ने इसे लिखा था । इस पोथी की लिखावट और तालपत्र को देखने से लगता है कि कम से कम यह तीन सौ वर्ष का प्राचीन है । यह रख रखाव के अभाव में जीर्णशीर्ण अवस्था में है । कितने पत्रे गायव हो गये है । सम्पूर्ण पोथी न होने के कारण यह पता नही चलता है कि यह कव लिखी गई, किसने इस लिखा और इसमें कुल कितने पद थे । इस पोथी में लगभग ३५० पद बचे हुए हैं ।

दुसरी पोथी नेपाल में पाई गई है । महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने इसे प्रथम-प्रथम नेपाली दरवारके पुस्तकालय में देखा था यह पोथी वहुत सुरक्षित है । इसे किसी मोरंग निवासी ने लोगों से सुनकर लिखा था, जिससे ऐसी गलती हुई है । इस पोथी में लगभग ६०० पद है ।

तीसरी पोथी है रागतरंगिणी । इसमें लोचन ने विद्यापति के वहुत से पद रखे है । यह ढाँई सौ वर्ष की प्राचीन पोथी है । लोचन ने लिखा है- "अपभ्रंश भाषा की रचना प्रथम-प्रथम विद्यापति ने ही की "।

पदावली की भाषा:

विद्यापति एक मधुर कवि थे । उनकी मधुरता सर्व विदित है । इनको अपनाने से स्वभाषा की ख्याति बढेगी । इस मनसाय को लेकर वंगाली हिन्दी इन्हें अपनी-अपनी भाषा

का प्रथम कवि मानने तकका दावा करदिया था । अव तो निसन्देह कहा जा सकता है कि ये मैथिल थें । मैथिलों की एक खास वोली है-मैथिली । विद्यापति मैथिल थे, अतः मैथिल लोग इन्हे अपनी भाषा मैथिली का आदिकवि मानते है । यह सच भी है ।

किंतु यह सोचने की वात है कि यह मैथिली किस भाषा की शाखा है । वंगाली या हिन्दी मिथिला के कुछ अन्वेषी विद्वान् विदुषी इसे स्वतन्त्र भाषा के रुप में मानते है । उनका कहना है कि मैथिली भाषा अति प्राचीन भाषा है । क्योंकि मिथिला राज्य का अपना एक महत्व रहा है । इस भाषा की अपनी लिपि है । बावू नागेन्द्र नाथ गुप्त के मैथिली को वुज वोली (हिन्दी) की एक शाखा माना है । गुप्त जी प्राच्य विद्या महार्णव कहे जाते है ।

मिथिला वंग देश से सटी हुई है । विद्यापति का जन्म दरभंगा में हुआ था, जो द्वारवंग या वंगाल का द्वार है । इसलिए मैथिलीपर वंग भाषा का प्रवाह जरुर पडा है । जिस तरह नेपाली पर मैथिली का प्रभाव पडा है । पदावली की भाषा आज कल की मैथिली से कुछ भिन्न है, यह स्वभाविक भी है । विद्यापति को हुए पाँच सौ वर्ष वीत चूके । इन पाँच सौ वर्षो में भाषा को आधुनिकीकरण के रंगो में भी रंगा जा रहा है, जो अनुचित कार्य है ।

इनकी भाषा की दुर्दशा भी खुव हुई है । वंगालियो ने उसे ठेठ वंगाल का रुप दिया है, तो मोरंगवालो ने मोरंग का रंग चढाया है । इधर बावू ब्रजनन्दन सहाय जी उसपर आधुनिक मैथिलीका रंग रौशन चढाए परन्तु मिथिला के गाँवो में रहनेवाली नारियाँ इनके पदावली की भाषा को सजाए रखी है ।

विद्यापति पदावली की विशेषता एवं विश्लेषण

विद्यापति की पदावली की अपनी विशेषता है । इसका स्वरुप रंग ढंग खास है । जो छिपाए नहीं छिपती है । जैसे हजारो पंक्षियो के कलरव को चिरती हुई कोकिल की काकली आकाश पाताल को रस प्लावित करती हुई अपना स्वतन्त्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रकार इनकी कविता भी अपना परिचय आप देती है । लाख चोरी की जाय परन्तु इनकी कविता में अपनी कविता रख सकना वहुत ही दुरुह कार्य है ।

इनकी भाषा इनकी खास अपनी भाषा है, इनकी वर्णन प्रणाली इनकी खास वर्णन प्रणाली है, इनकी भाषा स्वयं इनके ही है । इनकी पदावली पर खास की मोहर लगी हुई है । वंगला तथा मिथिला के अनेकों कवियों ने इनके अनुकरण पर कविताएँ की परन्तु कोई भी इनकी छाँया न छु सके । वे एक अजीव लोकप्रिय कवि हो चुके है । इनकी कविताओं में अजीव सा जादू है । यही कारण है कि राजाओं की गगनचुम्बी अट्टालिकाओं से लेकर गरीवों की टूटी फूटी झोपडियों तक में इनके पदों का आदर और सम्मान है । भूतनाथ के मन्दिर और कोहवर घर में इनके पदों का समान रुप से सम्मान है । मिथिला में जाकर यदि आप देखेंगे तो एक शिव पुजारी डमरु हाथ में लिए, त्रिपुंड रमाए, कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ गाते गाते तन्मय हो अपने आपको भूल जाता है, उसी प्रकार नव बधु को कोहवर ले जाती हुई कलकंठी कामिनियाँ सुन्दरी चललि पहु घर ना जाइतहि लागु परम डर ना गाकर नव वर वधु को हृदयोंको एक अव्यक्त आनन्द स्रोत में डुवा देती है । जिस प्रकार एक नवयुवक ससन परस खसु अम्वर रे, देखल धनि देह पढता हुआ एक मधुर कल्पना से रोमांचित हो जाता है उसी प्रकार एक बृद्ध जीवन से ऊवकर तातल सैकत वारि विन्दु सम सुत मित रमनि समाज, तोहे विसरि मन ताहि समरपिल अव मझु होव कोन काज । माधव, हम परिनाम निरासा । गाता हुआ नयन नीर गिराने लगता है । विद्यापति प्रतिनिधि कवि थे । जहाँ इन्होने श्रृंगार रसका प्रतिनिधित्व किया है वहीं भक्त रस का भी अगुवाई किया है, वही वे सामाजिक बुराइयो, छेंडखानीयों, अनमेल विवाहों पर भी अपनी लेखनी चलायी है । अन्तर इतना जरुर है की इन सव कुरीतियों का उजागर कृष्ण के सानिध्य में किया गया है । कही कही अवला नारी के मुखारविन्द से भी कही गयी है ।

सामाजिक कुरीतियो पर उँगुली उठाना, मान्यता प्राप्त बुराइँयो के विरोध में कलम चलाना कम हिम्मत की वात नही है । वेहिचक उन्होंने रास्ते में अवला नायिका के साथ जोर जर्वदस्ती का विरोध किया है-

कुंज भवन सएँ निकसलि रे, रोकल गिरधारी ।
एकहि नगर बसु माधव हे, जनिकर वटमारी .....॥ इत्यादि

अनमेल विवाह सम्वन्धी कुप्रथा के विरोध रुपी स्वर भी पद्य के रुप में देखें-

पियामोर वालक हम तरुनी
कोन तप चूकि भेलहुँ जननी ॥..... इत्यादि ।

इनकी पदावली के सम्बन्ध में अधिक क्या कहना विद्वद्वर ग्रियर्सन के शव्दो मेः- हिन्दु धर्म के सूर्य का अस्त भले हो जाय - वह समय भी आ जाए जब राधा और कृष्ण में मनुष्यों का विश्वास और श्रद्धा न रहें, और कृष्ण के प्रेम की स्तुतियों के लिए इह लोक में हमारे अस्तित्व के रोग की दवा है, अनुराग आता रहे, तो भी विद्यापति के गान के लिए जिसमें राधा और कृष्ण का उल्लेख है - लोंगो का प्रेम कभी कम न होगा ।

डा. ग्रियर्सन के कथन का प्रमाण वंगाल में जाकर देखा जा सकता है । जहाँ सहस्र सहस्र हिंदु आज तक विद्यापति के राधाकृष्ण विषयक पदों का कीर्त्तन करते हुए अपने आपको भुल जाते है । जिस प्रकार खीष्ट पादरी सोलमन के गान गाते है, उसी प्रकार भक्त हिंदु विद्यापति के अनूठे पदों को पढते है ।

इनकी उपमाएँ और अन्य अलंकार भी अनूठी ओर अछुती है । इनकी उत्प्रेक्षाएँ कल्पना के उत्कृष्ट विकास के उदाहरण हैं । रुपक का इन्होने रुप खडा कर दिया है । स्वभावोक्ति से इनकी सारी रचनाएँ ओत प्रोत है । श्रुत्यनुप्रास इनके पदों का स्वभाविक आभूषण है । प्रधान काव्य गुण प्रसाद और माधुर्य इनके पद-पद से टपकते है ।

प्राकृतिक वर्णन में तो इन्होंने कमाल ही कर दिया है । इनका वसन्त और पावस (वर्षा) ऋतु का वर्णन पढकर लोग मंत्रमुग्ध हो उठते है । इनके वसन्त और वर्षा ऋतु में मिथिला की खास छाप है । वसन्त में मिथिला की शस्य श्यामला भूमि अलंकृत और दर्शनीय हो जाती है तो पावस में हिमालय निकट होने के कारण यहाँ विजुलियाँ जोर से कडकती है - प्रायः कुलिशपात भी होता रहता है । इसका बडा ही अपूर्व वर्णन इनके पदों में हुआ है ।

इनका मिलन और विरह वर्णन भी अनोखा है । मिलन से पूर्व के आह्लादित इच्छाएँ तथा आतुरता मिलन में शारीरिक अंग प्रत्यंग को झंकृत हो उठना मन के भाव को और रसमय कर देती है । इनका विरह वर्णन तो प्रेमिका के हृदय की तस्वीर है उसमें वेदना हैं, व्याकुलता है, प्रियतम की प्रियतमा के प्रति तल्लिनता है । कृत्रिम अभास नही, नैसर्गिक आनन्द है । छन्द, रस और अलंकार स्वयं उपस्थित हो आए है । यही तो कवि के काव्य की विशेषता है ।

४.१ श्रृंगार परक पदावली

सामाजिक प्राणी होने के नाते कवि सामाजिक वातावरण से भलिभाँति परिचित होते हैं । कवि विद्यापति के समय में समाज में तुगलक बशी शासकों का आतंक व्याप्त था । यत्र तत्र आतंक का माहौल था । किसी का कोई रक्षक नही था । ऐसे में भगवत शरण ही एक आधार था । विद्यापति ने राधाकृष्ण के माध्यम से लोगों में विश्वास का वातावरण वनाने का प्रयास किया । उन्होनें जहाँ भी जिस प्रसंग की कविताएँ की है । वहाँ राधाकृष्ण स्वतः आगया है । राधा-कृष्ण प्रेम की युगल मूर्ति है । प्रेम में श्रृंगार वर्णन का बहुत महरव होता है । यह जगत ही नारी पुरुष के हास्य विलास और मनोरंजन का कीडा स्थल है । श्रृंगार रस प्रकृति के उद्‌भव और विकास में अपना अद्‌भुत योगदान देते आरहा है । जिस में रति क्रिया का अपना एक महत्व है । इसी लिए सृष्टि संरचना में इसका अपना खास महत्व है ।

विद्यापति प्रकृति प्रेमी थे । प्राकृतिक सौन्दर्य को देखकर मंत्रमुग्ध हो जाते थे । राधाकृष्ण इस सौन्दर्य के संवाहक रहे है । अतः विद्यापति ने इन्ही के माध्यम से इनमें ही समर्पण भाव से श्रृंगार परक कविता लिखे है । यहाँ इनके द्वारा रचित यथा सम्भव श्रृंगार परक कविताओं को रखना अनुपयुक्त न होगा -

<u>वयः सन्धि</u>

सैसव जौवन दरसन भेल, दुहु दल बलहि द्वन्द परिगेल ॥२॥
कबहुँ बाँधय कच कबहुँ विथार, कबहुँ झाँपए अंग कबहुँ उघार ॥४॥
थीर नमान अथिर किछु भेल, उरज उदय-थल लालिम देल ॥६॥
चपल चरन, चित्त चंचल भान, जागल मनसिज मुदित नमान ॥८॥
विद्यापति कह कर, अवधान, वाला अंग लागल पंचवान ॥१०॥

यह पद केवल वंगाल की पुस्तकों से प्राप्त है । वयः सन्धि का यह मनोहर वर्णन है । खास कर शव्दों का चयन अनुपम है । उरज उदय थल लालिम देल, जितना ही स्वभाविक है, उदय स्थल का लालिमा देना यौवन रुपी सूर्य के उदित होने का भाव भी उसमें अंतर्निहित है ।

नख शिख:

कि आरे ! नव जौवन अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ, छओ अनुपम एक ठामा ॥२॥
हरिन इन्दु अरविन्द करिनि हिम, पिक बुझ्कल अनुमानि ।
नयन बदन परिमल गति तन रुचि, अओ अति सुललित बानी ॥४॥
कुच जुग उपर चिकुर फुजि पसरल, ता अरुझाएल हारा ।
जनि सुमेरु उपर मिलि ऊगल, चाँद विहुनि सबे तारा ॥६॥
लोल कपोल ललित मनि-कुंडल, अधर विम्ब अध जाई ।
भौह भुमर नासापुर सुन्दर, से देखि कीर लजाई ॥८॥
भनई विद्यापति से वर नागरि, आन न पावए कोई ।
कंस दलन नारायण सुन्दर तसु रंगिनि पए होई ॥१०॥

नख शिख का यह चमत्कार पूर्ण वर्णन है । उपमा, उत्प्रेक्षा, अपहुति, व्यतिरेक, यथासंख्य आदि अलंकारो का जमघट इसमें हो गया है । खास कर अपूर्व नव यौवन की सुन्दरताको साकार करने वाली चित्रात्मक वर्णन शैली सराहनीय और अस्वादनीय है । यह पद राग तरंगिणी में अधुरा तथा तरौनी तल पत्र में पुरा प्राप्त हुआ है । श्रृंगार वर्णन में नख शिख वर्णन का अपना एक अलग महत्व है ।

सध: स्नाता:

कामिनि करए सनाने, हेरितहि हृदय हनए पँच वाणे ॥२॥
चिकुर गरए जलधारा, जनि मुख-ससि डरें रोअए अँधारा ॥४॥
कुच -जुग चारु चकेवा, निअकुल मिलत आनि कोने देवा ॥६॥
ते संकाएँ भुज पासे, बाँधि धएल उडि जाएत अकासे ॥८॥
तितल वसन तनु लागू, मुनिहुक मानस मन मथ जागू ॥१०॥
सुकवि विद्यापति गाने, गुनमति धनि पुनमत जन पावे ॥१२॥

इसी से मिलता जुलता विहारी का दोहा देखें-
"भीगे पट तट को चली, न्हाए सरोरुह माँह ।
विहँसत सकुचत सी हिए, कुच आँचर बिच वाँह।"

किंतु कुच आँचर बिच बाँह का कोई कारण नही बताया गया है -

जवकि उनसे कई सौ बर्ष पूर्व के विद्यापति ने न केवल चित्र ही उपस्थित किया है, अपितु अनूठा कारण भी दे दिया है । इस गीत में भावानुकूल शव्दोका अनूठा चयन है । कामिनी, पँचबाने, ससि, मनमथ, जागू आदि शब्द विशेष रुप से ध्यातव्य हैं । मुख शशि के डर से अंधकार के रोने की उपमा छायावादीन कवियों की पथ प्रदर्शिका है । किंवदन्ति है कि राजा शिवसिंह को वन्दी से घुडानें के लिए जव ये दिल्ली गए, तव सुलतान के आग्रह पर इन्होंने इसी पद को गाकर सुलतान को खुशकर अपने आश्रयदाता राजा शिवसिंह को कैद से छुडवाया था । यह गीत नेपाल पदावली राग तरंगिणी से. प्राप्त है ।

प्रेम प्रसंग

श्री कृष्णका प्रेम

पथ-गति नमन मिलल राधा कान । दुहु मन मनसिज पुरल संधान ॥२॥
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर । समय न बूझए अचतुर चोर ॥४॥
बिट गधि संगिनी सब रस जान । कुटिल नयान कएल समधान ॥६॥
चलल राज-पथ दुहु उरझाई । कह कवि सेखर दुहु चतुराई ॥८॥
प्रेम प्रसंग को जितना ही ओझल में रखा जाय, किंतु जानकार लोग तुरंत ही जान जाते है ।

राधाका प्रेम

मन मथ तोहि की कहव अनेक ।
दिरु अपराध परान पए पीडसि, ते तुअ कओन विवेक ॥२॥
दाहिन नयन पिसुन गन बारल, परिजन बायहि आध ।
आध नयन-कोने जें हरि पेखल, तें भेल एत परमाद ॥४॥
पुर-बाहर पथ करैत गता गत, के नहि हेरए कान ।
तोहर कुसुम सर कतहु न संचर, हमरे हृदय पाँचो बान ॥६॥

दूती:

प्रेम प्रसंग में दूती का माध्यम लिया जाता रहा है । मन की आतुरता, घटपटाहट, वेचैनी इसी के माध्यम से भेजा जाता था । बीच में यह कार्य तोतामैना द्वारा भी किया जाता था । आज यह कार्य वहुत सरल हो गया है क्योंकि मोवाइल चुपके से यह असाध्य सन्देश पठादेता है । कृष्ण भी अपनी आतुरता यिसी के द्वारा राधा के यहाँ भेज वाते है -

आज हमें पेखल कालिन्दी कूले, तुअ विनु माधव विलुठए धूले ॥२॥
कत सत रमनि मनहि नहि आने । किए विष दाह समय जलदाने ॥४॥
मदन भुजंगम दंसलकान । विनहि अमिअ रस कि करव आन ॥६॥
कुलवति धरम काँच समतुल । मदन दलाल भेल अनुकूल ॥८॥
आनल बेचि नीलमनि हार । से तोहें पहिरव करि अभिसार ॥१०॥
नील निचोल झाँपनि निज देह । जनि घन भीतर दामिनि रेह ॥१२॥
चौदिसि चतुर सखि चलु संग । आज निकुंज करह रस रंग ॥१४॥
यह रुढि है -हाथी के द्वारा हाथी और स्त्री के द्वारा स्त्री फसाई जाती है ।

राधा की दूती:

सुनु मनमोहन कि कहब तोए । मुगुधिनि रमनी तुअ रोए ॥२॥
निसि-दिन लागि जपए तुअ नाम । थर थर काँपि पडए सोई ठाम ॥४॥
जामिनि आध अधिक जब होइ । बिगलित आज उठए तब रोइ ॥६॥
सखिगन जब परबोधए जाए । तापिनि ताप ततहिं अधिकाए ॥८॥
कह कवि सेखर ताक उपाए । रचइत तबहि रयनि लहि जाए ॥१०॥

नोक-झोंक:-

कर धए करु मोहि पारे । देवमएँ अपरुव हारे, कन्हैया ॥२॥
सखि सबे तेजि चलि गेली । न जानु कओन पथ भेली, कन्हैया ॥४॥
हमें न जाएव तुअ पासे । जाएव औघट घाटे, कन्हैया ॥६॥
विद्यापति एहो भानें । गुजरि भजु भगवाने, कन्हैया ॥८॥

जीव रुपी प्रियतमा ईश रुपी प्रियतम से मिलने को कैसे रहता है इस प्रसंगको कवि ने इस पद्य के माध्यम से व्यक्त किया है ।

'प्रभु मेरे प्रियतम मै प्रभु की वहुरिया' कह कर कवीर ने भी सम्वोधन किया है ।

सखी-शिक्षा

राधा की शिक्षा

सुनु सुनु ए सखि वचन विसेस । आजु देव हमें ताहि उपदेस ॥२॥
पहिलनहि बैठबि सयनक सीम । हेरइत पिया मुख मोडवि गीम ॥४॥
परसइत दुहु करें बारबि पानि । मौन रहबि पह करइत बानि ॥६॥
जब हमें सोंपब करे कर आपि । साधस धरबि उलरि मोहि काँपि ॥८॥
विद्यापति कह एह रस ठाठ । भए गुरु काम सिरवाओब पाठ ॥१०॥

श्रीकृष्णको शिक्षाः-

बुझब छएलपन आज ।

राहि मनि रतने आनसि अति जतने, वंचि सब रमनि-समाज ॥२॥
सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमरि धनि, आलिंगब दिढ अनुरागे ।
निर्भय करब केलि नहि बुझए एह, भौंरा भरें माजरिन भाँगे ॥४॥
पिरितिक बोल बोलि नियरे वइसाओव, नरव हनि आनव कोल ।
नहि-नहि कर धनि कपट भुलब जनि, यदि कह कातर वोल ॥६॥
केलि प्रसंग में नायक-नायिका के मनमें प्रेमरुपी अंकुर बढाने के लिए सखी-शिक्षिका का दायित्व निर्वाह करती है ।

मिलनः-

सुन्दरि चललिह पहु घरना । चहुदिस सखि सव कर धरना ॥२॥
जइतहु लागु परम डरना । जइसे ससि काँप राहु डर ना ॥४॥
जाइतहि हार टुटिए गेल ना । भूखना बसन मलिन भेल ना ॥६॥
रोए रोए काजर दहाए देल ना । अँदकहि सिंदुर मेटाए गेल ना ॥८॥

विद्यापति कवि गाओल ना । दुख सहि सहि सुख पाओल ना ॥१०॥

नायक और नायिका में मिलन की आतुरता होते हुए भी संकोच वश नायिका घवराती है । उसके इस झिझककों सखी गण दुर कर देती है ।

सखी-सम्भाषण

कि कहब हे सखि बात मानिक पड्ल कुवानिक हाथ ॥२॥
काच कंचन नहि जानए मूल । गुंजा रतन करए समतूल ।४॥
जे कछु कमु नहि कला रस जान । नीर खीर दुहु करए समान ॥६॥
तन्हि सएँ कैसन पिरिति रसाज । बानर कंठ कि मोतिय माल ॥८॥
भनइ विद्यापति एह रस जान । बानर मुँह की सोभए पान ॥१०॥

कौतुक

उठ उठ माधव कि सुतसि मन्द । गहन लाग देखु पुनिमक चन्द ॥२॥
हार रोमाबलि यमुना गंग । त्रिवली त्रिवेनी विप्र अनंग ॥४॥
सिंदुर तिलक तरनि सम भास । धूसर मुख ससि नहि परगास ॥६॥
एहन समय पूजह पंचबान । होअ उगरास देह रतिदान ॥८॥
पिक मधुकर पुर कहइत बोल । अलपओ अवसर दान अतोल ॥१०॥
विद्यापति कवि एहो रस भान । राए सिव सिंहासव रसक निधान ॥१२॥

नायिका के शरीर में तीर्थ राज प्रयाग का सांगरुपक चित्रित है । यहपद तरौनी पदावली में प्राप्त है ।

अभिसारः-

चन्दा जनि उग आजुक राती । पिया के लिखिए पठाउबि पाँती ॥२॥
साओन सएँ हम करव पिरीति । जल अभिमत अभिसारव रीती ॥४॥
अथवा राहु वुझाएब हंसी । पिबि उगिलह सीतल ससी ॥६॥
कोटि रतन जलधर तोहें लेह । आजुक रयनि घन तम कए देह ॥८॥
भनई विद्यापति सुभ अभिसार । भलजन करथि परक उपकार ॥१०॥

जगनिक की नायिका भी कहती है-

"कारि वदरिया बहिन हमारी, काँधा वीरन लगे हमार ।
आज वरिस जा मोरे मोहबे में , कंता एक रैन रह जायँ ॥"

विद्यापति कहते हैं कि अभिसार (शुभ) कार्य है इस लिए नायिका की सहायता के लिए चन्द्रमा को उसकी वात माननी ही चाहिए, क्योंकि सज्जन ही दुसरे का उपकार करते हैं । सरल हृदय मुग्धा नायिका के हृदय के अनूठे भावों को कवि ने बडी ही सरलता एवं कलात्मकता से दिखाया है । यह पद तरौनी ताल पत्र में प्राप्त है ।

छलनाः-

माधव इ नहि उचित विचार ।

जनिकं एहनि धनि काम कला सनि से किअ करु वेभिचार ॥२॥
प्रानहु चाहु अधिक कए मानए, हृदयक हार समाने ।
कोन परि जूगुति आनकें ताकह, कि थिक तोहर गेआने ॥४॥
कृपिन पुरुष के केओ नहि निक कह, जग भरि कर उपहासे ॥
निज धन अछइत नहि उपभोगब, केवल परहिक आसे ॥६॥
भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति, ई थिक अनुचित काज ॥
माँगि लाबए वित से जदि हो नित, अपन करब कोन काज ॥८॥

यह पद, सर ग्रियर्सन का संकलित पद है । सरलतम शब्दों में मार्मिकतम उपालम्भ इस पद का सबसे अनूठा चमत्कार है ।

श्रीकृष्णका मानः-

करतल कमल नयन ढर नीर । न चेतए अभरन कुंतल चीर ॥२॥
तुअ पथ हेरि हेरि चित्त नहि थीर । सुमिरि पुरुष नेहा दगध शरीर ॥४॥
कत परि माधव साधव मान । विरही जुवति मांग दरसन दान ॥६॥
जल मध कमल गगन मध सूर । आँतर चान कुमुद कत दुर ॥८॥
गगन गरज मेघ सिखर मयुर । कत जन जान सिनेह कत दूर ॥१०॥
भनइ विद्यापति विपरित मान । राधा बचनें लजाएल कान ॥१२॥

विद्यापति कहते है-कि (राधा ने श्री कृष्ण से कहा) यह विपरित मान कया कर रहे हो? मान करना तो स्त्रियोका काम है, पुरुष होकर कैसे मान करने लगे ? राधा की यह वात सुनकर श्री कृष्ण लज गए। विशेष यह मिथिला की राग तरंगिणी में प्राप्त है।

मान-भँग

बड रे चतुर मोर कान। साधन बिनहि भाँगल मोर मान ॥२॥
जोगी बेसधरि आओल आज। के इह समुझब अपरुब काज ॥४॥
सासु बचनें हमें भीख आनि। मोर मुख हेरइते गद-गद भेक ॥६॥
कह तब- 'मान रतन देह मोय'। समुझल तब हमें सुकपट सोय ॥८॥
जे किछु कयल तब कहइते लाज। केओ नहि जानल नागर राज ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दरि राई, किए तोहें समुझबि से चतुराई ॥१२॥

विशेष यह पद बंगाल के पद कल्पतरु (संग्रह) में प्राप्त है।

विदग्ध-विलासः-

बिगलित चिकुर मिलित मुख मंडल, चाँद बेढल घनमाला।
मनिमय कुंडल स्रवन दुलित भेल, घाम तिलक बहि गेला ॥२॥
सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल दाता।
रति विपरित समर जदि राखब, कि करब हरि-हर धाता ॥४॥
किंकिनि किनि किनि कंकन कन कन, घन घन नूपुर बाजे।
रति-रन मदन पराभव मानल, जय-जय दुंदुभि बाजे ॥६॥
तिल एक जघन सघन रब करइत, होअल सैनक संग।
विद्यापति कवि इ रस गाबए, जामुन मीलालि गंग ॥८॥

बसन्तः-

चलु देखए जाऊ रिति बसंत। जहाँ कुंद-कुसुम केतिक हसंत ॥२॥
जहाँ चंदा निरमल भमर कार। जहाँ रयनि उजागर दिन अंधार ॥४॥
जहाँ मुगु धलि मानि नि करए मान। परि पंथिहि पेखए पंचवान् ॥६॥
परिठबइ सरस कवि-कंठहार। मधुसूदन राधा बन बिहार ॥८॥

विरह

चानन भेल विषम सर रे, भूषन भेल भारी ।
सपनहुँ नहि हरि आएल रे, गोकुल गिरधारी ॥२॥
एकसरि ठाढि कदम तर रे, पथ हेरथि मुरारी ।
हरि विनु देह दगध भेल रे, झामर भेल सारी ॥४॥
जाह जाह तोहें ऊधब हे, तोहें मधुपुर जाहे ।
चन्द्रवदनि नहि जी उति रे, वध लागत काहे ॥६॥
भनइ विद्यापति मन दय रे, सुनु गुनमति नारी ।
आज आओल हरि गोकुल रे, पथ चलु झट-झारी ॥८॥

कृष्णका विरह

रामा हे, से किअ विसरल जाई ।
करधरि माथुर अनुमति मँगइत, ततहि परल मुरुछाई ॥२॥
किछु गद गद सरे लहु-लहु आखरे, कान्ह कल्लबर रामा ।
कठिन कलेवर तहिं चलि आओल, चिन्तरहल ओहि ठामा ॥४॥
तनि विनु राति दिवस नहि भावए, ताहि रहल मन लागी ।
आन रमनि संग राज सम्पद हमे, आछिअ जइसे विरागी ॥६॥
दुइ एक दिवस निचय हम जाओब, तोहें परबोधह राई ।
विद्यापति कह चित्त रहल नहि, पेम मिलाएब जाई ॥८॥

भावोल्लास

मोरा रे आँगन चानन केरि गछिया, ताहि चढि कुररए काग रे ।
सोने चोंच बाँधि देव ओहि बायस, जओं पिआ आओत आज रे ॥२॥
गावह सखि सब झूमरि लोरी, मयन-अराधए जाउँ रे ।
चहुदिस चम्पा मउलि फूललि, चान इजोरिआ राति रे ॥४॥
कइसे कए हमें मयन अराधब, हाइति बडि रति-सति रे ॥५॥
विद्यापति कवि गावए तोहर, पहुअछि गुनक निधान रे ।
राअ भोगीसर सब गुन आगर, पदमा देइ रमान रे ॥७॥

४.२ प्रार्थना

कनक-भूधर-शिखर-वासिनि, चन्द्रिका-चय-चारु-हासिनि ।
दशन-कोटि-विकास-बंकिम, तुलित-चन्द्रकले ॥१॥
क्रुद्ध-सुररिपु-वल निपातिनि, महिष-शुम्भ-निशुम्भ धातिनि ।
भीत भक्त-भयापनोदन, पाटव-प्रवले ॥२॥
जय देवि दुर्गे दुरिततरिणि, दुर्गमारि विमर्द-कारिणि ।
भक्ति-नम्र-सुरासुराधिप, मंगल प्रवरे ॥३॥
गगन-मंडल-गर्भगाहिनि, समर-भूमिषु सिंह वाहिनि ।
परशु-पाश-कृपाण-सायक, शंख-चक्र-धरे ॥४॥
अष्ट-भैरवि-संग-शालिनि, स्वकर-कृत्त-कपाल-मालिनि ।
दनुज-शोणित-पिशित-वर्द्धित, पारणा-रभसे ॥५॥
संसारबन्ध-निदान मोचिनि, चन्द्र-भानु-कृशानु-लोचनि ।
योगिनी-गण-गीत-शोभित, नृत्यभूमि-रसे ॥६॥
जगति पालन-जन्म-मारण, रुप-कार्य-सहस्र-कारण ।
हरि-विरंचि-महेश-शेखर, चुम्व्यमान-पदे ॥७॥
सकल-पापकला-परिच्युति, सुकवि-विद्यापति-कृतस्तुति ।
तोषिते शिवसिंह-भूपति, कामना-फलदे ॥८॥

जय जय संकर जय त्रिपुरारि । जयअध पुरुष जयति अधनारि ॥२॥
आध धवल तनु आधा गोरा । आध सहज कुच आध कटोरा ॥४॥
आध हड्माल आध गजमोति । आध चानन सोह आध विभूति ॥६॥
आध चेतन मति आधा भोरा । आध पटोर आध मुंज डोरा ॥८॥
आध जोग आध भोग विलासा । आध पिधान आध दिग-बासा ॥१०॥
आध चान आध सिंदुर सोभा । आध विरुप आध जग लोभा ॥१२॥
भने कवि रतन विधाता जाने । दुई कए बाँटल एक पराने ॥१४॥

४.३ नचारी

सिव हो, उतरब पार कओन विधि ।
लोढव कुसुम तोरब बेलपात । पुजब सदासिव गौरिक साथ ॥
बसहा चढाय सिव फिरए मसान । भँगिआ जरठ दरदो नहि जान ॥
जप तप नहि कएलहुँ किछु दान । बिति गेल तिन पन करइत आन ॥
भन विद्यापति सुनह महेस । निरधन जानि मोर हरह कलेस ॥

हर जनि बिसरब मोर ममता, हम नर अधम परम पतिता ।
तुअ सन अधम उधार नदोसर, हम सन जग नहि पतिता ॥२॥
जम के द्वार जबाव कओन देब, जखन पुछत कर धरिआ ॥४॥
जब जम किंकर कोपि पठाओत, तखन के होत धरहरिया ॥६॥
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति, संकट विपरित वानी ।
असरन सरन चरन सिर नाओल, दया करह सुलपानी ॥८॥

कखन हरब दुःख मोर,
हे भोला नाथ ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाओल,
सुख सपनहु नहि भेल,
हे भोला नाथ ।
एहि भव-सागर थाह कतहु नहि,
भैरव धरु करुआर,
हे भोला नाथ ।
भन विद्यापति मोर भोला नाथ गति,
देहु अभय वर मोहि,
हे भोला नाथ ।

आगे माइ, जोगिआ मोर जगत सुख दायक, दुःख ककरहु नहि देल ।
दुख ककरहु नहि देल महादेव, दुख ककरहु नहि देल ॥
एहि जोगिआ के भाँग भुल ओलक, धथुर खोआए धन लेल ॥

आगे माइ, कातिक गनपति दुइ जन वालक, जग भरि के नहि जान ।
तनिका अभरन किछुओन थिकइन, रति एक सोन नहि कान ॥
आगे माइ, सोना रुपा अनका सुत अभरन, आपन रुद्रक माल ।
अपना सुत लए किछुओ न जुरइनि, अनका लए जंजाल ॥
आगे माइ, छनमें हेरथि कोटि धन बकसथि, ताहि देखा नहि थोर ।
भनहि विद्यापति सुनु हे मनाइनि, थिकाह दिगम्बर भोर ॥

जानकी वन्दना

रे नरनाह सतत भजुताहि । जाहि नहि जननि जनक नहि जाही ॥२॥
बसु नइहरा ससुरा के नाम । जनिक सिर चढि गेलि ओही गाम ॥४॥
सासुक कोर में सुतल जमाए । समधि विलहतँ बिलहल जाए ॥६॥
जाहि उदर सँ बाहरि भेलि । से पुनि पलटि ततहि चलि गेलि ॥८॥
भन विद्यापति सुकवि सुजान । कविक मरम कें कवि पहिचान ॥१०॥

गंगास्तुति

कत सुखसार पाओल तुअ तीरे । छाडइतें निकट नयन वह नीरे ॥२॥
कर जोरि विनमओं विमल तरंगे । पुन दरसन होअ पुनमति गंगो ॥४॥
एक अपराध छेमब मोर जानी । परसल माए पाए तुअ पानी ॥६॥
कि करब जप-तप जोग धेआने । जनम कृत्तारथ एकहि सनाने ॥८॥
भनहि विद्यापति समदओं तोहि । अन्त काल जनु विसरह मोहि ॥१०॥

श्रीकृष्ण कीर्तन

माधव, कत तोर करब बडाई ।
उपमा तोहर कहब ककरा हम, कहितहुँ अधिक लजाई ॥
जओ सिरिखण्ड सौरभ अति दुरलभ, तओं पुनि काठ कठोरे ।
जओं जगदीस निसाकर तओं पुनि, एकहि पच्छ उजोरे ॥
मनिक समान आन नहि दोसर, तनिकर पाथर नामें ।
कनक कदलि छोटि लज्जित भए रह, की कहु ठामहि ठामें ॥

तोहर सरिस एक तोहीं माधव , मन होइछ अनुमाने ।
सज्जन जन सओं नेह उचित थिक, कवि विद्यापति भाने ॥

तातल सैकत बारि बिन्दु-सम, सुत मित रमनि-समाजे ।
तोहि बिसारि मन ताहि समरपल, अव मभ्हु होव कोन काजे ॥
माधव हम परिनाम निरासा ।
तोहें जगतारन दीन दयामय, अतए तोहर बिसबासा ॥
आध जनम हम नींद गोङायलुँ, जरा सिसु कत दिन गेला ।
निधुबन रमनि रंग रसे मातलुँ, तोहि भजब कोन बेला ॥
कत चतुरानन मरि मरि जाओत, न तुअ आदि अवसाना ।
तोहि जनमि पुनु तोहि समओत, साग लहरि समाना ॥
भनइ विद्यापति शेष समन भय, तुअ बिनु गति नहि आरा ।
आदि अनादिक नाथ कहओसि, भव तारन भार तोहारा ॥

जतने जतेक धन पापें बटोरलुँ, मिलि-मिलि परिजन खाए ।
मरनक बेरि हरि केओ नहि पूछत, करम संग चलि जाए ॥
हे हरि बन्दओं तुअ पद नाए ।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि पारक कओन उपाए ॥
जावत जनम हम तुअ पद न सेविलुँ, मति मय जुवती मेलि ।
अमरित तेजि हालाहल पीयलुँ, सम्पद विपदहि भेलि ॥
भनइ विद्यापति लेह मनहि गुनि, कहिलें कि जनिहय काज ।
साँझक बेरि सेवकाई मंगइते, हेरइते तुअ पद लाज ॥

व्यथा

माधव, कि कहब तिहरो गेआन ।
सुवहु कहल जब शेष कएल तब, करें मूँनल दुहु कान ॥२॥
आएल गमनक बेरि न नीन टरु तें किछु पुछिओ न भेला ।
एहनि करमहिनि हम सनि के धनि, कर सँ परसमनि गेला ॥४॥

जओं हम जनित हूँ एहन निठुर पहु, कुच-कंचन-गिरि-साँधि ।
कौसल करतल बाहु लता लय, दृढ करि रखितहुँ बाँधि ॥६॥
इ सुमिरिअ जब जाओं मरिए तब, बुझिपड हृदय पषाने ।
हिमगिरि-कुमरि चरन हृदय धरि, कवि विद्यापति भाने ॥८॥

प्रेम

फुल एक फुलबाडी लाओल मुरारि । जतने पराओल सुबचन बारि ॥२॥
चौदिस बान्हल सीलक आरि । जिबे अवलम्वन करु अवधारि ॥४॥
ततहु फुलल फुल अभिनव पेम । जसु मूल लहए न लाखहु हेम ॥६॥
अति अपुरुब कल परिनत भेल । दुई जिव अछल एक भए गेल ॥८॥
पिसुन-कीट नहि लागल ताहि । साहसें फल देल बिहि निरवाहि ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दर सेह । करिअ जतन फलमत होए जेह ॥१२॥

दृष्टकूट

विद्यापति दरवारी कवि होते हुए भी जनकवि हुए अपने चारो ओर के वातावरण के प्रति कम जागरुक नहीं थें । गीत काव्य की दृष्टि से विद्यापति के गीत हिन्दी साहित्य की धरोहर है । उनके गीतों की सर्व प्रमुख विशेषता है- संगीतात्मकता, सहजता और स्वाभाविकता उनके गीतोका प्राण है । सौन्दर्य वर्णन में उनकी लेखनी प्रत्येक जगह चमत्कार उत्पन्न करती हैं, चाहे वे शारीरिक सौन्दर्यका वर्णन हो या भावानुभावका प्रकृति चित्रण । इस पहलु मे सौन्दर्यका निखा निरवय स्वरुप देखने को मिलता है ।

दृष्टकूटका प्रयोग विशेष रुप से साहित्यिक उत्कर्ष एवं काव्य की शैली के लिए किया जाता है । विद्यापति के दृष्टकूटका विषय राधा कृष्णका सौन्दर्य का वर्णन और उनके प्रेम विरह जन्य क्रियाकलाप राधा कृष्ण के विरह में निम्न लिखित पद दृष्टकूटका अनुपम उदाहरण है । साहित्य में गणितका अद्‌भूत प्रयोग विद्यापति ने किया है-

भरल भवन तेजि गेलाह मुरारी ।
जत दिन गेलाह तकुर गुण चारी ॥
प्रथम एगारह झिटि दिए पाँच ।

तीसक तेगुण थोर दिन साँच ॥

इसी प्रकार विरह में विदग्ध राधा के मन की व्यथा को इन पंक्तियो से व्यक्त किया है -

कुसमित कानन कुंजे बसी । नयनक काजर घोर मसी ।
नखसँ लिखल नलिनि दल पात । लीखि पठाओल आखर सात ॥
प्रथमहि लिखलनि पहिल बसंत । दोसरे लिखलनि तेसरक अन्त ।
भनइ विद्यापति आखर लेख । बुधजन होथि से कहत बिसेख ॥

४.४ सामाजिक विकृतियाँ और उसका उद्‌बोधन

विद्यापति के समय में भी अनेक कुरीतियाँ समाज में व्याप्त थी । वृद्धवर का विवाह प्रचलित था तो वालकवर का विवाह भी प्रचलित था । वाल विवाह का वर्णन कवि के शव्दों में -

पिया मोर बालक हम तरुनी ।
कोन तय चूकि भेलहुँ जननी ॥
पहिर लेल सखि दछिनक चीर ।
पिआ के देखैत मोर दगध सरीर ॥
पिआ लेल गोद कए चललि बाजार ।
हटिआक लोक पूछ के लागु तोहार ॥
नहि मोर देओर कि नहि छोट भाइ ।
पुरव लिखल छल बालमु हमार ॥
बाट र बटोहिआ कि तुहू मोरा भाई ।
हमरो समाद नैहर लेने जाइ ॥
कहिहुन बावा के किनए धेनु गाई ।
दुधवा पिआइकें पोसता जमाइ ॥
नहि मोरा टाका अछि नहि धेनु गाइ ।
कोन विधि पोसब बालक जमाइ ॥
भनइ विद्यापति सुनु ब्रजनारि ।
धैरज धए रहु मिलत मुरारि ॥

अपने समय में प्रचलित परकीया (स्वयं दूतिका) नायिका के सम्बन्ध में सजीव चित्रण किया है । पति परदेश में , आप अकेली घर में । काम देवका मार तन मे, भावका अभाव मन में परपुरुष संग में , दण्ड विधान वन में , तोकहें कौन युवती संयम रख सकती है । वर्तमान समय में वह विकृतिया भयानक रुप लेती जा रही है, परन्तु कोई साहित्यकार इसके विरुद्ध कलम उठाने की हिम्मत नही कर पा रहे हैं । लेकीन विद्यापति अपनी लेखनी उठाई थी । देंखें-

अपर पयोधि मगन भेल सूर ।
नखि-कुल-संकुल बाट विदूर ॥
नरि परिहरि नाविक घर गेल ।
पथिक गमन पथ संशय भेल ॥
अनतए पथिक करिअ परबास । हमें धनि एकलि कंत नहि पास ॥
एक चिंता अओक मनमथ सोस । दसनि दसा मोहि करमक दोसा ॥
रयनि न जाग सखी जन मोर । अनुखन सगर नगर भम चोर ॥
तोहें तरुन हमें विरिहिनि नारि । उचितहु बचन उपज कुल गारि ॥
वामा बचन बाम पथ घाव । अपन मनोरथ जुगुति बुझाब ॥
भनइ विद्यापति नारि सयानि । भलकए रखलक दुहु अनुमानि ॥

परकीया (स्वयं दूतिका) नायिका का दुसरा रुप देखें-

हमें जुवती पति गेलाह विदेस । लग नहि बसए पडोसिअहु लेस ॥
सासु ननदि किछुओ नहि जान । आँखि रतौंधी सुनए न कान ॥
जागह पथिक जाह जनु भोर । राति अंधार गाम बड चोर ॥
भरमहु भौरि न देख कोतवार । पओलहु नेओते न करए विचार ॥
अधिप न कर अपराधिहु साति । पुरुष महते सव हमरे सजाति ॥
विद्यापति कवि एह रस गाव । ऊकुतिहि अबला भाव जनाब ॥

राहजनी (रास्ते में जाते समय छेड-छाड) का भी उदाहरण देखें -

कुंज-भवन सएँ निकसलि रे, रोकल गिरधारी ।
एक हि नगर वसु माधव हे, जनि करु बटमारी ॥२॥
छाड कान्ह मोर आंचर रे, फाटत नव सारी ।

अपयस होएत जगत भरि हे, जनि करिअ उधारी ॥४॥
संगक सखि अगुआइलि रे, हम एकसरि नारी ।
दामिनी आए तुलाइलि हे, एक राति अंधारी ॥६॥
भनहि विद्यापति गाओल रे, सुनु गुनमति नारी ।
हरिक संग किछु डर नहि हे, तोहे परम गमारी ॥८॥

विद्यापति सरस, मृदुभाषी और हृदय ग्राही कवि थे । गुण और दोष को सही मूल्याङ्कन करने में माहिर थे । कविता के माध्यम से विकृति दुर करने की अग्रीम भूमिका का निर्वाह किया और उसको दुर करने के लिए आध्यात्मिक उपाय भी सुझाए जो दुरदृष्टि रखने वाले कवि के लिए ठीक ही था ।

लम्वे समय तक पति परदेश में रहने के कारण उनकी पत्नी के मनोभाव (मन में उठे भाव) पर पुरुष के सम्पर्क में आने की मनोवृत्ति, उक्तियों के द्वारा आमंत्रण उनके समय की विकृतियां भी जिसे कवि ने यहाँ उजागर किया है । देखें स्वयं दूतिका का एक रुपः-

हमें जूवती पति गेलाह विदेस, । लग नहि बसय पडोसिअहु लेस ॥
सासु ननन्दि किछुओ नहि जान । आँखि रतौंधी सुनए न कान ॥

कवि विद्यापति ने अपने समय में प्रचलित अनमेल विवाह के कई नमूने पेश किए है -

किशोरी कन्या और अधवैस वर को विवाह का प्रचलन कितना मार्मिक हृदय विदारक दृश्य उपस्थित करता है । देखें -

आहे सखि आहे सखि लए जनि जाह । हम अति बालिका निरदए नाह ॥२॥
बोल भरोसे दस सखि गेली लेआए । पहुक पलंग पर देलन्हि बैसाय ॥४॥
गोट-गोट सखि सव गेलि बहराए । बजर केवार हुनि देलन्हि लगाए ॥६॥
ताहि अवसर सखि जागल कन्त । चीर सँभारइत जिंव भेल अन्त ॥८॥
नहि-नहि करिअ नयन ढर नेार । काँच कमल भमरा झिक झोर ॥१०॥
जइसे डगमग नलिनिक नीर । तइसे डगमग धनिक सरीर ॥१२॥
भन विद्यापति सुनु कविराज । आगि जारि पुनि आगिक काज ॥१४॥

विद्यापति घर आंगन मे भींजे कवि थे । वे नर नारी के अनुभव को अच्छी तरह जानते थे । नारी पुरुष में पारस्पारिक सम्बन्ध होते हुए भी नारी पराधीना होती है । अपने पर उसका कोइ अधिकार नही होता - पिता रक्षति कार्मार्य प्रचलन था । पुरुष प्रधान समाज में नारी का स्थान गौण कर दिया जाता है । उसकी कोमल भावनाओं को पिसल दिया जाता है । उसके सारे मनोरथ ज्यों के त्यों धरे रह जाते है । उसका स्वर्णिम सपना चकनाचूर कर दिया जाता है । परवशवर्तिनी वह पशुवत निरीह होकर रह जाती है -इसी का एक हृदय विदारक दृश्य विद्यापति के शव्दों में -

हम नहि आजु रहव एहि आंगन, जो बुढ होएत जमाए गे माइ ॥
एक तँ बइरि भेल वीध विधाता, दोसर धिआ केर ..... वाप ॥
तेसरे वइरि भेल नारद बाभन, जे बुढ जमाए गे माइ ॥
पहिलुक बाजन डामरु तोडव, दोसरे तोडब रुंड माल ॥
बडद हाँकि बरिआत बैलाएब, धिआलय जाएब पडाए गेमाइ ॥
धोती लोटा पतरा पोथी, सेहो सभ लेवहि छिनाए ॥
जँ किछु बजता नारद बाभन, दाढी धए लेव घिसिआए, गे माइ ॥
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि, दिढ करु अपन गेआन ॥
सुभ सुभ कए सिरी गौरी विबाहू, गौरी हर एक समान, गे माइ ॥

विद्यापति समन्वयवादी कवि थे । समन्वय विना समाज में सुख शान्ति और अमन चयन आना कठिन होता हैं - वे अच्छी तरह जानते थें । राजा और प्रजा में समन्वय विना राष्ट्र समुन्नत नहीं हो सकता है । इस गूढ रहस्य को वे अच्छी तरह समझते थें । अतः प्रजा की समस्यायें, राज महल तक पहूँचाने के लिए स्वरचित पद्यों का सहारा लिया और राजा प्रजा में संवाद वाहक का काम कर आपसी मधुर सम्बन्ध को बढाया । कृषि जन्य अभाव को उन्होंने पार्वती के शव्दों में शिव से कहवाकर अपना दायित्व का निर्वाह किया:-

वेरि वेरि अरे सिव हमें तोहि कहलहूँ किरिषि करिअ मन लाए ।
रहिअ निसंक भीख मंगइते सब, गुन गौरव दुर जाए ॥२॥
निरधन जन बोलि सव उपहासए, नहिं आदर अनुकम्पा ।
तोहें सिब आक धतुर फूल पाओल, हरि पाओल फुल चम्पा ॥४॥
खटँग कारि हर हर जे बनाविअ, तिरसुल तोडि करु फार ।

वसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ, पारिअ सुरसरि धार ॥६॥
भन विद्यापति सुनहु महेसर, कि लागि कएलि तुम सेवा ।
एतए जे होएत से बरु होअओ ओतए बिसरि जनि देवा ॥८॥

विद्यापति के समय में कृषि कर्म को उत्तम माना जाता था । वाणिज्य व्यवसाय मध्यम स्तर में था चाकरी (नौकरी) निम्मस्तर में गिना जाता था तो भीख मांगकर जीवन यापन करना हेय (घृणा) वृत्ति में रकखा गया था । भीक्षा वृत्ति का समाज में उपहास होता था :-

उत्तम खेती मध्यम वान, निषिध चाकरी भीख निदान इसी से तो कवि ने शिव पार्वती के संवाद से भीक्षा वृत्ति को अन्त करना चाहा है । जीवन का सुन्दर रुप पारिवारीक समाजस्य में देखा जाता है । सामञ्जस्य स्थापित करने में नारी की अग्रणी भूमिका होती है । इसी लिए समाज ने नारी को गृह लक्ष्मी का दर्जा दिया है । हम नारी से बहुत कुछ आशा रखते हैं परन्तु आदर देने में कंजुसी करते है -

छोरा जन्म्यो कान दून सोन । छोरी जन्म्यो खान देउ फर्सीको झोल

फर्सी को झोल की विषय सोच रखते है । विशेष निर्णय लेने में नारी की अवमानना करते है जिससे परिवार आन्दोलित होता है और सामाजिक मूल्य मान्यताएँ हिलने लगती है । कवि ने इसी आशय को यहाँ संकेत किया है:-

एत जप तप हम की लागि कएलहुँ कथिला कएल नित दान ।
हमर धिया के एहो वर होएताह अव नहि रहत परान ॥२॥
हर के माए वाप नहि थियइन नहि छइन सोदर भाए ।
मोर धिआ जओं सासुर जइती बइसती ककर लग जाए ॥४॥
घास काटि लौटि बसही चरौती कुटती भाँग धथुर ।
एकोपल गौरी बैसहु न पौती रहती ठाढी हजुर ॥६॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि, दिढ करु अपन गेआन ।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर, गौरा देवी जान ॥८॥

हमारे पर्वत प्रदेश में नारी की अवस्था दयनीय है । जहाँ घर से लेकर वाहर तक का काम नारी को ही करना पडता है । पुरुष अधिकार के वल पर जीते है तो नारी काम के वल पर नारी काम के वोझ के नीचे दवती हुई मरणासन्न अवस्था को प्राप्त करती हैं । इसी से तो नारी के हम दर्दी में कवि मैथिली शरण गुप्त जी लिखते है -

अवला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी ।
आँचल में है दुध और आखों में पानी ॥

विद्यापति नारी के इस असह्य पीडा का उद्‌बोधन बहुत पहले ही कर चूके है । माता माता होती है । मातृ हृदय पिपल का पत्ता होता है जो तनिक भी वयार रुपी सन्देह में डोलने लगता है । अपने सन्तान पर आने वाले भावी कष्ट को समझ बह घबरा जाती है । माता के मृदु हृदय को विद्यापति के विना और कौन जान सकता है । कवि ने माता के इस कोमल भावना को यों व्यक्त किया है -

नाहि करब वर हर निरमोहि आ ।

वित्ता भरि तन बसन न तन्हिका, बाघ छाल काँख तर रहिआ ॥२॥
बन-बन फिरथि मसान जगावथि, घर आगन ओ बनौलनि कहिआ ।
सासु ससुर नहि ननदि जेठौनी, जाए बैसति धिआ ककरा ठहिआ ॥४॥
वूढ वडद ढकढोल गोल एक, सम्पति भाँगक झोरिआ ।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि, सिव सन जग के कहिआ ॥६॥

हिन्दु संस्कृति में पति-पत्नी का सम्बन्ध नैसर्गिक माना गया है । पति-पत्नी का सम्बन्ध जन्म जन्मान्तर का होता है जिसे बनाए रखने में ही हमारी विशेषता है । इस नैसर्गिक सम्बन्ध को कुछ चुगल खेार विग डना चाहता है इसी आशय का एक पद देखें -

कतए गेलाह मोर बढुवा जती । पिसल भाँग रहल सेह गती ॥२॥
आन दिन निकहि रहथि मोर पती । आज लगाए देल कओने उद्‌गती ॥४॥
एकसरि जोहए जाएब कोन गती । ठेसि खसब होएत दुरगती ॥६॥
नन्दन वन विच मिलला महेस । गौरी हरखित भेली छुटल कलेस ॥८॥
भनइ विद्यापति सुनु हे सती । एहो जोगिआ थिका त्रिभुवन पती ॥१०॥

विद्यापति एक आयामिक कवि थे । दुरदृष्टि रखते थे । इहलौकिक और पारलौकिक नियन्त्रण कर्ता के समीप जन जन की पीडा रुपी अर्जी अपर्ण करते रहते थे । एक असहाय की पीडा को सदा शिव के समीप रखते है - सिव हो, उतरब पार कओन विधि ।

लोढव कुसुम तोरब वेल पात । पुजब सदा शिव गौरिक साथ ॥
वसहा चढल सिव फिरए मसान । भंगिआ जरठ दरदो नहि जान ॥
जप तप नहि कएलहुँ किछु दान । विति गेल तिन पन करइत आन ॥
भन विद्यापति सुनह महेस । निरधन जानि मोर हरह कलेस ॥

तुलसी का स्वन्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा, भाषा निवन्ध मति मञ्जुल मातनोति भी कवि कोकिल के पदानुशरण में चला है । जहाँ न जाय रवि वहाँ जाय कवि की उक्त उक्ति कवि कण्ठहार में पूर्णतः समाहित है । कवि कोकिल भावना के धनी कल्पना के आधार शिला, दयामया के अर्णव, भावूकता के चन्द्र ऊर्मि, परोपकार के नील गगन, भक्ति की पराकाष्ठा, आश्रय दाताओं का ऋणी, ललनाओं का माधुर्य, तरुनाई का रौनक, वृद्ध वृद्धाओं का आध्यात्मिक भैषज, राष्ट्र के सजग सैनिक तथा मैथिली भाषा के आदि कवि एवं पारदर्शी थे । ये दिव्य दृष्टि से परिपूर्ण थे । इनकी दिव्य दृष्टि मिथिलांचल के हर गाँव गली, खेत खलिहान, घर आंगन, बाग बगैचा, वापी तडाग, मठ मन्दिर तथा साँझ उषा के मर्म को स्पर्श करती रही है । इनके प्रातः कालीन और सन्ध्या कालीन गीत लहडियाँ - किसके मन को न चुराती है । वे देश भक्ति राज सेवा और जनसेवा में पूर्ण आस्था रखते हुए आजीवन इसका निर्वाह किए । वे जन भावना को प्रथम स्थान देते रहे है । अपने समय के सामाजिक वुराइयाँ और विकृतियाँ हटाने में वे सवसे आगे देखे जाते है ।

परिच्छेद ५

५.१ जनप्रतिनिधित्व

जनता की इच्छा मुताविक चलने वाले व्यक्ति जनप्रतिनिधि कहाजाता है । जन चेतना जगाने वाला सामाजिक कुरीतिको दुर फेकने वाला, सामुहिक न्याय दिलाने वाला, समरसता का पाठ सिखाने वाला, निष्कपट, निश्छल व्यक्ति ही जन प्रतिनिधित्व कर सकता है । अन्यथा नहीं जनप्रतिनिधि मृदुभाषी, मिलनसार, परोपकारी, परपीडा हरण करनेवाला और कोमल हृदय का होता है । जनता की सेवा करना महान कर्म होता है । विद्यापति महान थे क्यों कि उन्होने मनसा वाचा और कर्मणा से जन सेवा की । वे सरस्वती पुत्र थे । शिवोपासक थे । अवाल वृद्ध नर नारीयों के मानोगत भाव को यथा स्थान पहुँचा ते थे । प्राप्त अप्राप्त उनके अनेकों पद मिथिला तो क्या वंगाल विहार, नेपाल और भारत के अन्य प्रान्तों में भी समय सापेक्ष उपयोगी सिद्ध होते जा रहे है ।

विद्यापति साधक कवि थे । कवि का अर्थ होता है - विद्वान ज्ञानी, मर्मज्ञ, विशारद, कोविद, साधक तथा सम्यक दृष्टिवान । विद्यापति कवि के सभी उपनामो से परिपूर्ण थे । चमत्कारिक व्यक्तित्व थे । इसी आधार पर तो यवनों के हाथों कैद राजा शिवसिंह को अपनी जान पर खेल कर छुडवाकर लाए । अपनी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, भेष देश और नरेश के प्रति इनके मन में वहुत वहुत आदर भाव था । वे आध्यात्मिक सुख को असल सुख मानते थे । इसी लिए अपने पदों के माध्यम से लोगों का ध्यान (मन) ईश्वर के प्रति प्रेरित किया । विद्यापति का समय दहशत का काल था । छोटे छोटे राजा लोग यवनों का आधिपत्य स्वीकार कर चुके थे । स्वाभिमानी राज परिवार सतायें जा रहे थे । अस्मिता खतरे में थी । कोई रक्षक नजर नहीं आ रहा था । इस विषम परिस्थितियों से लोगों को बचाने के लिए उन्होनें राधा कृष्ण को जन समक्ष रक्खा । राधाकृष्ण सर्व शक्तिमान होने के कारण उनके प्रति लोगों की आस्था जगी । बाह्य शक्ति कमजोर होने पर लोग प्रभुशरण ही तो जाते हैं ।

महाकवि विद्यापति कविता के ही नहीं जाति, संस्कृति और देश के भी निर्माता थे । उनमें रक्षा और रञ्जन दोनो भावो का दर्शन होता था । वे अन्नदाता के रुप में भी प्रसिद्ध थे । असहायों की रक्षा करना वे अपना परम कर्तव्य समझते थे । इसी दया भाव के कारण वे कला के उपासक हो गये । उनमें सौन्दर्य, प्रेम और श्रृंगार के भाव पुट पुटकर भरे हुए थे

। यही कारण था कि अपनी इसी काव्य कला की महानता के कारण वे विश्व के बेजोर कवि है । गीत लय के वे विशेष पारखी थे, इसी लिए उन्हें मैथिल कोकिल की संज्ञा दी गयी है । उनकी मधुर गीतों ने हमारे सूखे मन को स्नेह और करुणा की अमृत धारा से सिंचित किया है । उनके हर पद सोना में सुगन्ध उपस्थित करता है ।

विद्यापति एक कवि ही नही एक महान सामाजिक सांस्कृतिक एवं परोपकार्य व्यक्तित्व के रुप में भी हमारे सामने देखे जाते है । राष्ट्रिय एवं सामाजिक संकटो की घडी में ं उससे निबटने के लिए साधन और स्रोत भी सुझाए हैं । वे सदा प्रेरणा के विम्व है । वे जितने विशिष्ठ थे, उतने ही सामान्य भी । इनकी रचना विशिष्ट और सामान्य सभी वर्गो के लिए समान लोक प्रिय होती रही है । वे हमारे आदर्श के ध्रुवतारा है । विद्यापति भाषा और महानता के धनी थे । मानवता की सीमा पार कर चूके थे । वे वेष्टि से समष्टि पर जोड देते पाए गये हैं । इसी से तो मैथिली भाषा को मिथिला का न कह कर देशी भाषा कहा है । देसिल वयना सव जन मिट्ठा । मैथिली भाषा को वे राष्ट्रिय भाषा के रुप में उपस्थित किए है । जो वंगाल से लेकर व्रज तक ससम्मान ग्रहण किए जाते है । इनकी भाषा में वंगाल की कोमलता है तो मैथिली का माधुर्य भी भरा पडा है । इसमें भोजपुरी का ओज है तो खडी वोली की स्पष्टता भी पाई जाती है । इनकी भाषा शैली की स्पष्ट छाप नेपाली भाषापर भी पडी है ।

कवि कोकिल जन कवि थे । इसका कुछ नमूना उदाहरण रुप में उनके पदो के आधार पर यहाँ उपस्थित करना अनुचित न होगाः- कि आरे नव यौवन अभिरामा ।

जत देखल तत कहए न पारिअ, छओ अनुपम एक ठामा ॥

यहाँ पर युवक युवती के मन मिठास को अत्यन्त कोमल रुप में व्यक्त किया गया है । कुंज भवन सएं निकसलि रे, रोकल गिरधारी । एकहि नगर बसु माधव हे, जनि करु बटमारी .....।

इस पद में रास्ते में आती जाती नव यौवना के साथ की जाने वाली छेड खानी (राह जनी) को उजागर किया गया है - नोंक-झोंक ५९ ॥

कि कहव हे सखि आजुक रंग । सपनहि सूतल कुपुरुष संग ॥

इस पद में कामातुरा यौवना की सकाम पीडा का असह्य कष्ट दिखाया गया है इसमें भेक कि जान कुसुम मकरन्द (मेढक क्या कभी फूलों के मकरंद का पान कर सकता है) यह

उक्ति कितना मार्मिक है । जीवन को गति देने के लिए जीवन्त रखने के लिए स्त्री और पुरुष के पारस्परिक प्रेम आवश्यक होता है । जीवन की सफलता सरसता में ही होती है - इसी आशय का एक पद देखें -

विगलित चिकुर मिलित मुख मंडल चांद वेढल घनमाल ।
मनि मय कुण्डल स्रवन दुलित भेल, घाम तिलक बहि गेला ॥२॥

विरहिणी नायिका के अन्तर्भाव को कवि ने यौ स्पष्ट किया है -

मधुपुर मन मोहन गेल रे, कए कुलिशक छाती ।
गोकुल सबहु विसारल रे, जत छलि अहि बाती ॥

परदेश गए पति अवधि वीत जाने पर भी न आने से व्यथित विरहिणी नायिका की व्यथा कवि ने यौं कहा है -

सखि हे हमर दुखक नहि ओर ।
इ भर बादर माह भादर, सून मंदिर मोर.....।१९९

इसी तरह का एक और पद्य देखें -

के पतिआ लए जाएत रे, मोरा पिअतम पास ।
हिए नहि सहए असह दुख रे, भेल साओन मास .....। २०३

विद्यापति एक ऐसे कवि थे । जिन्होंने एक ओर युवक युवती के प्रेमोलाप को श्रृंगार रस के माध्यम से व्यक्त किया है तो वहीं पर वियोग जनित पद लिखकर पति पत्नी के विछोड का मार्मिक चित्रण किया है तो वहीं पर माता द्वारा अपनी सन्तान के प्रति ममत्व का सुन्दर और हृदय ग्राही पद्य भी प्रस्तुत किया है -

नाहि करब वर हर निरमोहिया ।
वित्ता भरि तन वसन न तन्हिका, वाघ छाल काँख तर रहिआ ॥
वन वन फिरथि मसान जगावथि, घर आंगन ओ वनौलनि कहिआ ।
सासु ससुर नहि ननदि जेठौनी, जाए वैसति धिआ ककरा ठहिआ ॥२३६॥

लोभ से ग्रसित व्यक्ति भी वृद्धावस्था महशुस करने के वाद शिव शरण की याचना करते है-

तोरब कुसुम, तोरव वेल पात । पुजव सदा सिव गौरिक साथ ॥ २३९॥

विद्यापति एक ऐसे कवि थे, जो इहलौकिक भोग के लिए आर्तजनो का निवेदन राज परिवार में पहूँचाते थे तो, पारलौकिक सुख के लिए आर्त अर्जी भूतेश्वर तक -

हर जनि विसरव मोर ममता, हम नर अधम परम पतिता ।
तुअ सन अधम उधार न दोसर, हम सन जग नहिं पतिता ॥२४१॥

जनप्रतिनिधि वही होता है जो दुसरे के दु:ख सुख को अपना समझ कर चलता है । विद्यापति जन प्रतिनिधि थे । इसी लिए तो वे भगवान सदा सिव के आगे आर्तों के अर्जी वढाते रहे है:-

कखन हरब दु:ख मोर,
हे भोला नाथ ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाओल
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोला नाथ ।
एहि भाव सागर थाह कतहु नहि,
भैरव धरु करु आर हे भोला नाथ ।
भन विद्यापति मोर भोला नाथ गति,
देहु अभय वर मोहि, हे भोला नाथ ॥ २४३॥

विद्यापति को अपने आराध्य देव के प्रति इतना अटूट विश्वास था कि वे समझते थे कि मेरी पैरवी खाली नही जाएगी अत: वे आर्तजनों को आश्वस्त करते है -

आगे माई जोगिआ मोर जगत सुख दायक दुख ककरहु नहि देल ।
दुख ककरहु नहि देल महादेव दुख ककरहु नहि देल ॥२४६॥

कवि ने अपने समय में व्याप्त भाँग गंजा और चरस के प्रति नसा करने वाले लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा है -

जोगिआ भँगवा खाइत भेला रँगिया, भोला बौडहवा ।

सव के खिलावे भोला पाँच पकवनमा, आप खाए भाँग धथुरवा ॥२४७॥

औसत औरते दयालु और आदर्श पथानुगामी होती है ।

वह अपने पति, घर परिवार और वाल वच्चे को खुश हाल देखना चाहती है । कुलत से अपने पति को बचाना चाहती है । कवि ने ललनाओं के इस आकांक्षा का वर्णन यो किया है - एहि जोगिआ के भाँग भुलओलक, धथुर खोआए धन लेल ।

आगे माइ, कातिक गनपति दुई जन वालक जग भरि के नहि जान ।

तनिका अभरन किछुओ न थिकइन, रति एक सोन नहि कान ॥२४६॥

ललन और ललनाओ के लिए जहाँ कवि श्रृंगारिक पक्ष लिया है तो वहीं निरास, जीवन से त्रस्त भयाकुल लोगों के लिए दीनबन्धु के आगे यो निवेदन किया है -

माधव वहुत मिनति कर तोहि ।

दए तुलसी तिल देह समरपल, दया जनि छाडव मोहि ॥

गनइत दोस गुन लेस न पाओब जब तोहें करव विचार ।

तोहें जगनाथ जगत कहाओसि, जग बाहर नहि मुञि घाट ॥२५३॥

यह जगत् माया छल कपट प्रपंच इर्ष्या का संसार है जहाँ से निकल पाना असम्भव है । मोह एक ऐसा संजाल है जो अज्ञान रुपी निशा में डूवाए रखता है जव कुछ होश होता है तव तक सव लुट गया होता है । आएँ देखे कवि के मन मन्दिर का ओझल दृश्य:-

तातल सैकत वारि-बिन्दु-सम, सुत मित-रमनि-समाजे ।

तोहि विसारि मन नाहि समरपल, अव मझु होब कोन काजे ॥

माधव हम परिनाम निरासा ।

तोहें जगतारन दीन दया मया, अतए तोहर बिसबासा ॥

आध जनम हम नींद गोडायलुँ, जरा सिसु कत दिन गेला ।

निधुबन रमनि रंग रसे मातलुँ, तोहि भजब कोन बेला ॥

कत चतुरानन मरिमरि जाओत, न तुअ आदि अवसाना ।

तोहि जनमि पुनु तोहि समओत, साग लहरि समाना ॥
भनइ विद्यापति शेष समन भइ, तुअ बिनु गति नहि आरा ।
आदि अनादि नाथ कहओसि, भवतारन भार तोहारा ॥२५४॥

कवि वा लेखक समाज का आदर्श (दर्पण) होता है । वह ऐसा ऐना होता है - जिसमें आप अपने अवयवों को भलिभाँति देख सकते है । "ज्ञान राशि के संचित कोष का नाम साहित्य है" । कवि साहित्यकार होते है । समाज को वनाने में उनकी अग्रीम भूमिका होती है । अन्धकार को हटाने में रोशनी का काम करते हैं । धन दौलत मदान्ध वना देता है । लोलुप परिजन जीवन को गर्त में डाल देता है और अन्त में शून्य क्षितिज दिखाई देने लगता है -

जतने गतेक धन पापें बटोरलुँ, मिलि मिलि परिजन खाए ।
मरकन वेरि हरि केओ नहि पूछत, करम सँग चलि जाए ॥
ए हरि, बन्दओं तुअ पद नाए ।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि पारक कओने उपाए ॥
जावत जनम हम तुअ पद न सेविलुँ, मतिमय जुबती मेलि ।
अमरित तेजि हलाहल पीयलुँ, सम्पद विपदहि भेलि ॥
भनइ विद्यापति लेह मनहि गुनि, कहिलें कि जनिह्य काज ।
सांझक बेरि सेवकाई मंगइते, हेरइते तुअ पद लाग ॥

विद्यापति लेखनी के धनी थे । समाज के हर क्षेत्र में उनकी दृष्टि पहुँच गई थी । समाज में पनप रहे कुरीति को वे उखाड फेकना चाह रहे थे । वाल विवाह, अनमेल विवाह उन्हे अच्छी तरह सोने नही देता था । कवि उसके विरोध में अपनी लेखनी उठाली थी -

पिआ मोर वालक हम तरुनी ।
कोन तप चूकि भेलहुँ जननी ॥
पहिरि लेल सखि दछिनक चीर ।
पिआ के देखैत मोर दगध शरीर ॥
पिआ लेल गोद कए चललि वाजार ।

हटिआक लोक पूछ के लागु तोहार ॥
नहि मोर देओर कि नहि छोट भाई ।
पुरब लिखल छल वालम हमार ॥
वाट रे बटोहिआ कि तुहू मोरा भाइ ।
हमरो समाद नैहर लेने जाइ ॥
कहि हुन वावा के किनए धेनु गाइ ।
दुधबा पिआइकें पोसता जमाइ ॥
नहि मोरा टाका अछि नहि धेनु गाइ ।
कोन विधि पोसब वालक जमाइ ॥
भनइ विद्यापति सुनु व्रजनारि ।
धैरज धै रहु मिलत मुरारि ॥२६३॥

विद्यापति अपने युग की विसंगतियों और कुरुप यथार्थ से आँखे नहीं वन्द कर ली थी । वल्कि पैनी नजर से पहचाना भी । वे पारखी थे सत्यम व्रुमात प्रियं व्रूमात् न व्रूयात् सत्यंप्रियम् ॥ नीति है । प्रिय सत्य कहना चाहिए, कटु सत्य कदापि नही । इसी लिए उन्होने कवीर जैसा दो टूक वात न कहकर अपनी प्रेम कविताओं के माध्यम से भोग परस्त सामन्ती युग में भी मदमस्त शासकों के मन को झकझोरा था । इनके ही पथ पर चलते हुए विहारी ने भी भोग परस्त शासकों का ध्यान खिंचा था -

नहि पराग नहि मधुर मधु, नहि विकास यहु काल ।
अलि कलि हिं सौ वध्यो, आगे कौन हवाल ॥

विद्यापति ने सूक्तियो द्वारा भी लोगों का उद्‌वोधन किया है - जन जागरण में उन्होंने चेताया है -

"मानिक पडल कुवानिक हाथ ।" (सखी प्रसंग)

अयोग्य व्यक्तियों के नेतृत्व सें अफशोस ही हाथ लगता है

"आइत पडले बुझिए विवेक" (संकट की घडी में वुद्धि की परीक्षा होती है)

प्रेम प्रसंग में कहा गया है - "विनु दुःख सुख कवहुँ नहि होए" (दुख उठाए विना सुख की प्राप्ति नही होती हैं)

नायिका शिक्षा- "पानिक पियास दूध किये जाव ?" (गरीवों को सव्ज वाग दिखाना) नायिका के प्रसंग ।

दरवारी कवि होते हुए भी विद्यापति असहायों और गरीबों के सुख दुःख के प्रति वहुत ही सचेष्ट रहते थे । यही कारण है कि श्रृंगारिक कवि होते हुए भी जनता के असल सेवक थे । जिसके चलतें नव नव नूतन होए के अनुसार वे दिन प्रति दिन जन प्रेमी होते जा रहे हैं ।

५.२ सुधार तथा उपाय

विद्यापति को श्रृंगारिक कवि कह कर उनसे पल्ले झाडने वाले वहुत से आलोचक मिल जाएगें । परन्तु उन्हे समझना चाहिए कि विद्यापति से पहले भी वहुत श्रृंगारिक कवि हो गये है । विद्यापति तो मात्र उसका प्रतिनिधित्व किया हैं । संरक्षण के अभाव में इनके कतिपय जनप्रिय पद इधर उधर विखड गये है । कुछ धूर्त लोगों ने विद्यापति के नाम से पद रचकर उसमें घुसपैठ कर रकखा है । जिसकी छानविन जरुरी है । विद्यापति ने नारी शोषण के प्रति घोर आपत्ति भी कि थी जिसका उदाहरण गाँवो में गाने जाने वाली अनेक गीतों से मिलता है । इस तरह सूक्ष्म दृष्टि से चिन्तन करने पर विद्यापति का साहित्य श्रृंगार और कलात्मक ही नहीं, सामाजिक, साँस्कृतिक और नैतिकता का प्रेरणा स्रोत भी सिद्ध होता है ।

आज समाज विखण्डन पथ पर चल रहा है । संस्कृति ह्रासोन्मुख है । पश्चिम हवा चल रही है । नव पिढी और पुरानी पिढी में अन्तरद्वन्द्व चल रहा है । भाषा के व्यर्थ के झमेले उठ रहे है । युवा वर्ग विदेश पलायन में हैं । राष्ट्रियता में ग्रहण लग रहा है । ऐसे समय में विद्यापति के कृति का अध्ययन और मनन वहुत जरुरी है ।

अतः अपनी संस्कृति जाति और राष्ट्र के समृद्धि के लिए युवकों को अपने इस महान कवि के साहित्य के संरक्षण में आगे आना होगा । नैतिक शिक्षा के विना राष्ट्र सबल हो ही नहीं सकता है । राष्ट्र सेवको को संकुचित दायरों से उठने होगें । समाज सुधारकों को सचेत होना होगा । विद्यापति की भाषा मैथिली के प्रायः ६२ प्रतिशत शव्द घुले मिले हुए है । जो नेपाली भाषा को मजबूती प्रदान कर रहे हैं । विद्यापति के कृतियों को खोजकर और उसे प्रकाशन कर जनहीत में उसे प्रचार प्रसार किया जा सकता है ।

अध्याय ६

सारांश, उपसंहार तथा निष्कर्ष

६.१ सारांश

आज के मशीनी युग में लोगों को फुर्सत कहाँ है जो साहित्यिक चिन्तन करे । अर्थोपासना इतनी वढ गयी है कि नैतिक अनैतिक कार्यो का कही से भी कोइ ख्याल नही रकखा जाता है । सनातनी सामाजिक वन्धने ढिली पड गयी हैं । सद्भाव का वातावरण नष्ट प्रायः होता जा रहा है । सुख और दुःख वाह्य परिवेश से जोडा जा रहा है । वुढे पाके एकाकी जीवन विताने पर वाध्य है । ऐसे में इस शोधपत्र का महत्व वढ गया है ।

विद्यापति समाजवादी कवि थे । समाज में समन्वय चाहते थे । परोपकार के प्रशंसक थे । गरीवों के मसीहा थे । नारी पुरुष में समभाव चाहते थे । राज भक्ति और देश भक्ति उनमें कूट कूट कर भरी पडी थी । सामाजिक कुरीति और भेदभाव को दुर करना चाहते थे । इसी लिए आज के सन्दर्भ में उनके योगदान को जनसमक्ष लाने के लिए विद्यापति की जीवनी, पारिवारिक परिवेश, राज्याश्रय, कृतियाँ, पदावली के विषय में जानकारी करना । उनके द्वारा रचित पद्योका सूक्ष्म अध्ययन करना भाषा के प्रति उदार सोच रकखना, कर्म को प्रधान स्थान देना, आस्था का दीपक जलना, पितृऋण, देव ऋण और गुरुऋण के प्रति सजग रहना, अतिथि देवो भवः का स्थान सर्वोपरि रखना है ।

विद्यापति मात्र श्रृंगारिक वा भक्त कवि नही थे । वे सामाजिक कवि थे । समाजका प्रतिनिधि करते थे । मानवता के अग्रणी थे । अतः उनके पद चिन्हों के आधार पर उनकी रचनाओं के आधार पर उन्हे महामानव के रुप में जन समक्ष लाना ही इस शोधपत्र का उद्देश्य है । कवि को सिर्फ श्रृंगारिक कवि कह कर उनके साथ न्याय नही किया गया है । अतः उनके विचार कार्य रचना और सहयोग के आधार पर उनके साथ सही न्याय करना ही इस शोधपत्र का सारांश है । मुझे आशा और विश्वास है कि इस शोधपत्र से सामाजिक मधुरता वढेगी, कुरीतियाँ दुर होगी । भाषा और राष्ट्र के प्रति सच्चा प्रेम जागृत होगा । नारी पुरुष में सद्भाव बढेगा । पति पत्नी में मधुर सम्बन्ध होगें । माता पिता में श्रद्धा जागेगी । मातृभूमि के प्रति झुकाव बढेगा । ईश्वर भक्ति की प्रेरणा मिलेगी । अशान्ति

घटेगी, सामाजिक सम्बन्ध प्रगाढ होगें । आध्यात्मिक शक्ति वढेगी । ऊँच नीच का भेद मिटेगा । आपसी तनाव दुर होंगें । नारी हिंसा घटेगी ।

६.२ उपसंहार

विद्यापति वहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न थे । साधना स्वरुप इनमें पाण्डित्य और कवित्व दोनो गुण प्राप्त हुआ था । विद्यापति के समय में लोक भाषा में कविता करना हेय समझा जाता था । इसी लिए इनकी प्रारम्भिक रचनाएँ संस्कृत, अपभ्रंश और प्राकृतिक में हुई । लेकिन इनके हृदय में भाषा के प्रति जो कोमल भाव छिपा था उसे एक न एक दिन अवश्य फूटना था । जयदेव रचित गीत गोविन्द पढकर इनके मन में भाषा के प्रति अपार स्नेहका संचार हुआ और ओठो में गुन गुनाहट तैरने लगी । प्रेम, आनन्द, आल्हाद और आराधना ये तथ्यगत भाव कृति के रुप में लिपि वद्ध होते गए । वीज रुप में राधाकृष्ण का अलौकिक प्रेम लौकिक प्रेम के रुप में यत्र तत्र रस की वर्षा करने लगा । जहाँ रस की वर्षा होती है वहाँ आनन्द गीत के रुप में स्वयं फूट पडती है । वही आनन्द सौरभ को उजागर कर अहलाद को अहलाव करव के रुप में नारी के मन में संचित भावो को यरुणाद्र कर आँखो में आसू की झरी लगा देती है । जहाँ अविरल आँसू की वर्षा हो वहाँ देवी देवताओं की आराधना स्वभाविक हो जाता है ।

विद्यापति श्रृंगारिक कवि थे । इनकी अधिकांश रचनाएँ राधाकृष्ण संवन्धित है । तथापि नारी के सम तथा विषम मनोदशाका सम्यक वर्णन इनकें पदों में हुआ है। यही से वो जनप्रिय कवि विद्यापति के रुप में देखाई पडते है ।

इस लघु अनुसन्धान (शोध) पत्र में उनके पद्यो के आधार पर उन्हे जनप्रिय कवि के रुप में पाठको के वीच उपस्थित किया गया है । जिस के लिए उन से सम्वन्धित हर पहलुओ पर ध्यान रखकर उन्हे कसौटी पर कसा गया है । जिसके लिए श्रृंगार, प्रेम, आनन्द और उपसना परक पद्यो को खोज खोजकर पाठकों के सामने लाया गया है । मुझे महशुस हुआ है कि नारी और पुरुष के मनवेग (मनोदशा) का पारखी विद्यापति के समान और कवि कम ही नजर आते है । अतः इस शोधपत्र से जिज्ञासुओ को पिपासा कम होगी । क्योकी विद्यापति से सम्वन्धित हर पक्षो वा पहेलुओ पर विचार करते हुए उनके लोक प्रियता के मुख्य मुख्य पक्षो पर विशेष ध्यान केन्द्रीत किया गया है ।

६.३ निष्कर्ष

संस्किरत है कुप जल भाषा वहता नीर,
जव चाहो तवहि डूवो निर्मल होत शरीर ॥

संस्कृत के ज्ञान जल का सदुपयोग कुछ जिज्ञासु वर्ग ही कर पाते है जव कि भाषा रुपी जल सवों के लिए ग्राह्य होता है । मैथिली भाषा के कला पक्ष और भाव पक्ष, गीति काव्यको हर विभाग और उप विभाग तथा गीत काव्य का पूर्व रुप और कवि को वाद को विकास क्रम का भी इस शोध पत्र में भी समावेश किया गया है । विद्यापति जनप्रिय कवि किस आधार पर हुए । उन्हें लोक प्रियता हासिल करने में किस विधिका योगदान रहा इस पर विचार करते हुए गीत काव्य के हर पहलुओ पर निर्वाध छलांग चलाते हुए सामाजिक मूल्य मान्यता की रक्षा करते हुए उसके द्रर्वल पक्षों पर ध्यान देकर कुरीतियों को डर करने का जोरदार आवाज उठाते हुए कवि जन जन का कण्ठहार गये है । हमारे समाज में शोध के अभाव में अनेक कवि रत्न तथा उनकी बहुमूल्य कृतियाँ ओझेल में दबी है । प्रसाधनो की कमी और अनेक कठिनाइयों के कारण सत्य तथ्य पता लगना मुश्किल होता है, खास कर महिलाओं के लिए तो अति दुष्कर । साहित्य समाजका दर्पण होता है । कवि तो परमेश्वर होते है क्योंकि साहित्य रचना वे करते है - ज्ञानराशी के संचित कोष का नाम साहित्य है जिससे लोगों की रसपान करातें है । विद्यापति हर माने में सद्गुरु थे । समाज के सेवक थे । जन्मभूमि और मातृभाषा के सपूत थे । अपने समय के कुरीतियों को दुर करने के लिए राधाकृष्ण को गुहारा है । हिन्दू धर्म में प्रचलित वहु ईश्वरवाद का समर्थन किया है । धार्मिक विवाद को हल करते हुए शैव, शाक्त्य और वैष्णव धर्म के प्रति सम भाव कर शिव सिवा और राम सीता राधाकृष्ण गंगा आदि तीर्थस्थलो को अपनी रचनाओं में स्थान देकर धर्म समन्वय किया है ।

इस तरह सुक्ष्म दृष्टि से चिन्तन करने पर विद्यापति साहित्य प्रेम श्रृंगार और अलौकिक सौन्दर्य का शिखर ही नहीं किन्तु सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिकता का प्रेरणा श्रोत भी सिद्ध होता है । किसी भी जाति, क्षेत्र या राष्ट्रका व्यक्तित्व उसकी भाषा और संस्कृति से ही पहचाना जाता है और भाषा संस्कृतिका आधार उसका वह साहित्य है जो एक लम्वी समृद्ध परम्परा द्वारा निर्मित होता है ।

कवि विद्यापतिका व्यक्तित्व वहु आयामिक है तथा वहाँ उदार चित्त वाले भक्त कवि भी है । जनभाषा में उन्होनें अपने उपास्य देव राधा कृष्ण के चरणो में अपने गीतों की जो अवली अर्पित की वह वाद के कविओ और भक्तो के लिए प्रेरणा का श्रोत वन गया है । **जर्ज अव्राहम ग्रियर्सन ने एन इन्ड्रोडक्सन टु द मैथिली लेंग्वेज** मे विद्यापति के कृष्ण लिला विषयक पदों का महत्व जिन शास्त्रो मे किया है वह अत्यन्त प्रेरणादायक है- "हिन्दु धर्म का सूर्य अस्त हो सकता है । वह समय भी आ सकता है । जव कृष्ण में विश्वास और श्रद्धाका अभाव हो जाय । कृष्ण प्रेम की स्तुतिओं के प्रति जो भवसागर के रोग की दवा है विश्वास जाता रहे तो भी विद्यापति के गितो के प्रति जिनमे राधा और कृष्ण के प्रेम का वर्णन है लोगो की आस्था और श्रद्धा कम न होगी" ।

वस्तुत: विद्यापति शुद्ध जनप्रिय कवि थे । जिनके समक्ष धार्मिक संकिर्णताका महत्व नही था । हिन्दी साहित्यको श्रृंगार रस और भक्ति रस से उन्होने समृद्ध करने का जो स्तुत्य प्रयास किया है वो हिन्दी साहित्य के प्रेमिओ के लिए प्रकाश स्तम्भ की तरह जगमगाता रहेगा ।

अस्तु